संकलन भाग—१

अस्मिता

के० के० रावत

लेखकीय उद्‌गार

व्यक्तित्व के विकास का एक महत्वपूर्ण पहलू अपने विचारों को प्रभावशाली रूप से अभिव्यक्ति करने की क्षमता है। लेखन इस अभिव्यक्ति का एक माध्यम है। विचारों को संगठित रूप से प्रकट करने की क्षमता आत्मविश्वास की भावना को जन्म देती है और आत्मविश्वासी व्यक्ति ही सफलता प्राप्त कर सकता है। मेरे इस विचार को मान्यता देते हुए हमारे समाज के परम् श्रद्धेय श्री बलवंत राय जी ने इसको अपनी लेखनी द्वारा सिद्ध भी किया है। बचपन से अब तक मैं इनके स्नेह की वर्षा में नहा रहा हूँ। ये संवेदनशील अपनी रचनाओं से प्रमाणिक तथ्यों को उजागर ही नहीं करते हैं वरन् सामाजिक पृष्ठभूमि में अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रस्तुत करते हैं। अस्मिता के आवरण का भार उठा कर भा० सा० एवं सां० अकादमी के प्रकाशन में सहयोग किया है। इनके साहित्यिक लगाव की सराहना करते हुए दीर्घायु होने की कामना करता हूँ।

ऐतिहासिक लेखन बड़ा ही दुरूह कार्य है, इसमें कल्पना काम नहीं आती है। समय स्थान एवं समकालिक घटनाओं/सामाजिक पहलुओं का सूक्ष्म निरीक्षण करना पड़ता है। साहित्य की अन्य विधाओं को छोड़ कर जो व्यक्ति/ साहित्यकार इस विधा को वास्तविक रूप में अपनाता है वह प्रशंसनीय है। अपने जीवन के अधिकतम हिस्से को साहित्य से अछूता रखे हो वह व्यक्ति यदि ऐसी विधा को चुनता है तो यही मानना पड़ता है कि उसकी छिपी प्रतिभा उभर रही है। प्रतिभा की कोई आयु सीमा नहीं होती है। ऐसी प्रतिभाएँ हमारे समाज में आगे आ रही हैं। श्री राम प्रकाश सरोज, आई०पी०एस० से.नि. की भी इस प्रतिभा का स्वागत है। आज यह सीढ़ी के प्रथम् चरण पर हैं, कल यह अंतिम चरण पर होंगे। मैं इनके उज्जवल साहित्यिक भविष्य की शुभकामना करता हूँ।

समाज के उभरते हुए दैदीप्यमान साहित्यकारों का स्वागत करते हुए उनके उज्जवल साहित्य के लिये शुभकामना करता हूँ।

६१/६१, संजयपुरम्, इंदिरा नगर,
लखनऊ–१६।
दूरभाषः ३४५५१५

के० के० रावत,
अध्यक्ष
भारतीय साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अकादमी
एवं
पासी सामाजिक सेवा संस्थान पी०एस०³

संकलन भाग—१

अस्मिता

के० के० रावत

अस्मिता

कृष्ण कान्त रावत

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशक
भारतीय साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अकादमी
बी–१२२७, इंदिरा नगर, लखनऊ

मुख्य संपादक: के० के० रावत, बलवंत राय।

संपादक पर्षद: चन्द्रभान सिंह, आर० के० सरोज, सुन्दरलाल सरोज,
सरस्वती प्रसाद रावत, संजीत कुमार, सुरेश चन्द्र रावत।

सचिव: हेमन्त कुमार रावत, राम सजीवन रावत।

सहयोग राशि रू.50.00 / संस्करण प्रथम् / आवृति 1000 / वर्ष ज0 1999

आवरण सज्जा एवं कम्पोज़िंग : इम्पैक्ट ग्राफिक्स, लालबाग, लखनऊ–226 001, दूरभाष: 222636, 208446

मुद्रक : त्रिशक्ति प्रिंटर्स, संजयपुरम, लखनऊ–16, दूरभाष: 350003

पुस्तक मिलने का पता : पी0 एस0³, 91/92, इन्दिरा नगर लखनऊ–16, दूरभाष: 345515

नोट : प्रस्तुत लेखों की जिम्मेदारी उनके लेखकों की है।

ASMITA (Collection) by K. K. Rawat
Rs. 50.00, Available at PS3, 91/92, Indira Nagar, Lucknow-16, Tel: 345515

Note : Reposnibility for the correctness of internal details rests with the individual writers.

अंधकार है वहाँ जहाँ आदित्य नहीं है,
मुर्दा है समाज जिसका साहित्य नहीं है।

परमपूज्य पिता

स्व. बजरंग बिहारी लाल रावत, भू.पू. विधायक

ए

व

म्

ज्येष्ठ भाई

स्व. राधेश्याम रावत जी की

स्मृति में

अनुक्रमाणिका

i अस्मिता की पूर्वोक्ति. .... के०के० रावत

ii भूमिका. .... बलवंतराय

1 भारत की व्यवस्था में पासी समाज की अस्मिता. .... के० के० रावत

4 50 वर्षों में मूल समाजों का साहित्य–साहित्य एक आवश्यकता .... के० के० रावत

7 अमर शहीद वीर शिरोमणि राजा गंगा बक्स रावत का जीवन वृत्त. .... सुनीता रावत

9 पिछड़ी/अनु0जाति/जनजाति क्यों? मूल/ आदि जाति क्यों नहीं?. .... के० के० रावत

13 महाराजा बिजली पासी की शासन व्यवस्था. .... बलवंत राय

15 मलीहाबाद संडीला के गौरव. .... के० के० रावत

17 एक जाति जिसे अंग्रेज़ विद्रोही मानते थे. .... शीतला प्रसाद

20 महमूद गज़नी की लूट. .... के० के० रावत

24 करारवीर–जौनपुरनामा. .... के० के० रावत

27 महकपरी - ऐतिहासिक सत्यकथा (*बेगम हज़रतमहल*) .... के० के० रावत

32 हमारे पासी सामाजिक संस्थान/संस्थायें एवं समितियाँ. .... के० के० रावत

46 सिंदूरी लाज (वीरवर बेनू की कथा), पंवारा कथा. .... बलवंतराय

49 मूर्तियों में सिमटता समाज- एक सर्वेक्षण. .... के० के० रावत

52 सामाजिक प्रगाढ़ता के लिये पासी समाज में समन्वय की आवश्यकता. .... खुशीराम पासी

53 फैजाबाद. .... हेमन्त कुमार रावत

55 पंचशीलों का पांचाल–गजेटियरों से . ... आर० के० सरोज

56 परम पराक्रमी सौदीन उर्फ़ शिवदीन - हमारे पुरखे. .... श्रीमती शान्ति देवी

58 An Overview - Pasi Raja Ganga Bux Rawat of Barabanki. .... ***K. K. Rawat***

65 सामाजिक इतिहास एक आवश्यकता (पाती मिली). .... बी० पापालाल

66 एका आंदोलन की शुरुवात, मलीहाबाद और संडीला से(दुर्लभ पुस्तकों से). .... संजीत कुमार

68 बनारस की पृष्ठभूमि में पासी. .... के० के० रावत

स्तम्भ – यह भी जानिए–12, पासी जाति मुजरिम नहीं–14, पासी सामाजिक सेवा संस्थान क्यों–19, वीर सातन पासी–23, निवेदन–26, तथ्यों के झरोखे से–31, अस्मिता भाग –दो के प्रमुख आकर्षण–46, आज–64, पंवारा भी हिन्दी साहित्य है–71।

अस्मिता की पूर्वोक्ति

हिन्दुस्तान में वीरों की कमी नहीं है इनमें से बहुतों ने पासी समुदाय का प्रतिनिधित्व किया है। किन्तु दुर्भाग्य की बात यह है कि उन लोगों (पासी नायकों) का इतिहास में नामोंनिशान नहीं है। राज्य काल का कोई पता नहीं। यह सब कैसे हुआ। ऐसा क्यों किया गया? किन समुदायों ने किया? ख़ास वर्ग के अलावा अन्य नायकों/राजाओं/वीरांगनाओं को जो मुल्क में अस्सी प्रतिशत मूल/आदिवासियों समुदायों से हैं उनका सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक और धार्मिक आधार पर मूल्यांकन नहीं होता है। साहित्य–इतिहास और धार्मिक ग्रन्थों में असमानता के साथ अमनुष्यता का दर्जा दिया गया है। जिन्हें खुलेआम देखा जा सकता है क्योंकि

वेद में छेद है, महाभारत में रक्तपात,
रामायण में द्वेष, उपनिषद में भेद।

यहीं पर साहित्यकारों/इतिहासकारों ने तोड़–मरोड़, लहूलुहान, जीर्ण–शीर्ण कर पेश किया ताकि इनका इतिहास और साहित्य में कोई अस्तित्व न रहे। **''यथार्थ सदैव कड़ुवा होता है''** यथार्थ की सच्चाई का पर्दाफाश करना प्रत्येक बुद्धिजीवियों, लेखकों, साहित्यकारों का पहला दायित्व है कि अपनी–अपनी कलम के जरिये ऐसे दबाए गए तथ्यों को पेश करें ताकि अतीत का दर्पण सामने आ जाए। संघर्ष के सागर का आमंत्रण, लहरों की ख़तरनाक चुनौती, दरिया में झंझावातों से दम भर लड़ने का संकल्प लिए फैली असमानता, अंधश्रद्धा और असत्य जैसी परतों को खोलने **''अस्मिता''** की नाव चल पड़ी है। एक ख़ास नियत के तहत जो भ्रामक स्थिति पैदा की जा रही है उसका खुलासा करने का प्रयत्न **''अस्मिता''** का है। **''अस्मिता''** की सार्थकता यह है कि इसमें प्रकाशित खोज पूर्व प्रमाणित रचनाओं के माध्यम से तस्वीर के दूसरे चेहरे और रूख को देखा जा सकता है।

''अस्मिता'' को लिखने/सामग्री उपलब्ध कराने जिन–जिन लोगों ने अपना अमूल्य समय व सहायता दी है उनका मैं हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ। प्रस्तुत लेखों में किसी के ऊपर कोई आक्षेप नहीं है केवल विचार ही है फिर भी यदि कुछ असंगत/त्रुटि हो गई हो तो उसके लिए सुविज्ञ पाठकों से क्षमा याचना करता हूँ। पासी समाज की अस्मिता के साथ कैसा खेल खेला गया है उसकी एक झलक भी यदि आपको **''अस्मिता''** में मिल जाती है तो हम अपने प्रयत्न को सार्थक और सफल मानेंगे।

सुक्रात को जहर पीने को बाध्य किया गया, ईसा मसीह को सूली पर चढ़ाया गया, गाँधी को गोली मारी गई, डा० अम्बेदकर की मूर्तियाँ तोड़ी गई व तोड़ी जा रही हैं। ऐसी व्यवस्थाओं के विरूद्ध लड़ने वालों को हमारा **सलाम** ! **''अस्मिता''** बनाए रखने, समाज को एकता की डोर में बाँधने का हमारा जेहाद साहिर के शब्दों में,

फौज़ हक को कुचल नहीं सकती, फौज़ चाहे किसी यज़ीद की हो,
लाश उठती है अलम बनकर, लाश चाहे किसी शहीद की हो।

- के० के० रावत
अध्यक्ष, पी.एस.[३] व भारतीय
साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अकादमी
६१/६२, संजयपुरम, इन्दिरा नगर,
लखनऊ-१६, ✆ :०५२२-३४५५१५

भूमिका

अस्मिता के प्रकाशन का उद्देश्य पासी समाज की अस्मिता–प्राचीन, मध्यकालीन और वर्तमान कालीन ऐतिहासिक युग में क्या थी? उससे पाठकों को अवगत कराना है। पासी समाज के भारतीय इतिहास में किए गए योगदानों के विषय में सामान्य जन को कोई जानकारी नहीं है क्योंकि भारतीय इतिहासकार व्यवस्था की परिधि को लांघकर झाँकने में अपनी तौहीनी समझते हैं जबकि आर्यो के भारत में प्रवेश के समय उससे पूर्व अनार्य/असुर समझी जाने वाली जातियों के ही राज्य थे। उन्हीं से उनका संघर्ष होता रहा। व्यवस्था के जन्मदाता स्वयं व अपने महर्षियों को जिम्मेदार न ठहरा कर उसकी दैविक सृष्टि (ब्रह्मा:कृति) बता कर यहाँ के मूल/आदि जातियों के लोगों को विवश किया। इनका पूर्ण परिचय/वर्णन अस्मिता के प्रथम लेख *''भारत की व्यवस्था में पासी समाज की अस्मिता'* में बड़े सुन्दर ढंग से दिया गया है।

आश्चर्य की बात है कि पासी समाज में अतीत में हिन्दू धर्म और देश के विरूद्ध कोई कदम नहीं उठाया बल्कि उनके धर्म की रक्षा ही की परन्तु उन्हें सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और शैक्षिक क्षेत्र में प्रताड़ित किया गया। इनके योगदानों की उपेक्षा की गई, इनके इतिहास को दबाया गया, सामरिक शक्तियों का हास किया गया। यही नहीं इस जाति के महापुरूषें, वीरों, वीरांगनाओं के विषय में कुछ नहीं लिखा गया। जब साहित्य के क्षेत्र में इन मूल जातियों का प्रवेश शुरू हुआ तो इनके साहित्य को दलित साहित्य की संज्ञा दी गई जबकि **कोई साहित्य दलित नहीं हो सकता है, अश्लील हो सकता है।** प्रश्न है कि डा० अमर्त्यसेन ने अर्थशास्त्र में गरीब और कमजोरों के कल्याण की हिमायत कर नोबुल पुरस्कार अर्जित किया है, तो क्या उनके अर्थशास्त्र को दलित साहित्य कहा जाएगा? कदापि नहीं। क्या भारत उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार अथवा भारत–रत्न उपाधि से विभूषित नहीं कर सकता था? आज वर्ण–व्यवस्था के समर्थक विद्वान भी निचले तबके के लोगों पर काव्य लिखने वालों को हेय दृष्टि से देखने लगे है। देश हित में प्राणों की आहुति देने वाले दलितों की प्रशंसा करने को भी दलित साहित्य कहा जाने लगा है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में अब दलित साहित्य का वर्गीकरण रखा जाने लगा है। इन परिस्थितियों में आज यह आशंका है कि **अस्मिता** नामक इस पुस्तक को भी कहीं दलित साहित्य न कहा जाए।

इस पुस्तक में उपेक्षित पासी समाज के संगठनात्मक विकास, समाज के कुछ गौरवों, सामाजिक/सामरिक स्थितियों आदि के संबंधित लेखों का संकलन है। यह लेख अपने में ही खोजपूर्ण एवं प्रमाणिकता लिए हुए हैं। अमर शहीद क्रांतिवीर पासी राजा गंगा बक्स रावत का जीवन–परिचय श्री कृष्ण कान्त रावत की अमूल्य खोज है। राजा गंगा बक्स रावत अपने पुत्र सहित १८५७ की क्रांति से पूर्व सन् १८५० ई० में ईस्ट इंडिया कम्पनी के सिपहसालारों के अत्याचारों और धोखेपूर्ण कारनामों से शहीद होने वाले व्यक्ति थे। उसी ऐतिहासिक खोज पर आधारित उनकी जीवन चर्चा संबंधी एक लेख श्री रावत की *अवध विलीनीकरण के पूर्व* नामक छप रही पुस्तक से उद्धृत है। लोकगीतों, पवारा से भी ऐतिहासिक तथ्यों की जानकारी उपलब्ध होती है। मोहम्मद गज़नी की लूट और जौनपुर का इतिहास प्रमाणिक तथ्यों के साथ लेखों में अंकित किया गया है। आशा ही नहीं मुझे पूर्ण विश्वास है कि भारतीय समाज के लोग इस पुस्तक का अध्ययन कर प्रमाणिक जानकारी प्राप्त कर लेखकों का उत्साहवर्धन करेंगे।

- ***बलवंतराय***, एम. ए., एलएल.बी.
पूर्व संयुक्त सचिव (से०नि०), उ०प्र० शासन
५६५क/७५/ग, अमरूदही बाग, आलमबाग, लखनऊ

राजा गंगाबक्स रावत, कार्यकाल- सन् 1832-1850
प्राणोत्सर्ग- 18 सितम्बर सन् 1850

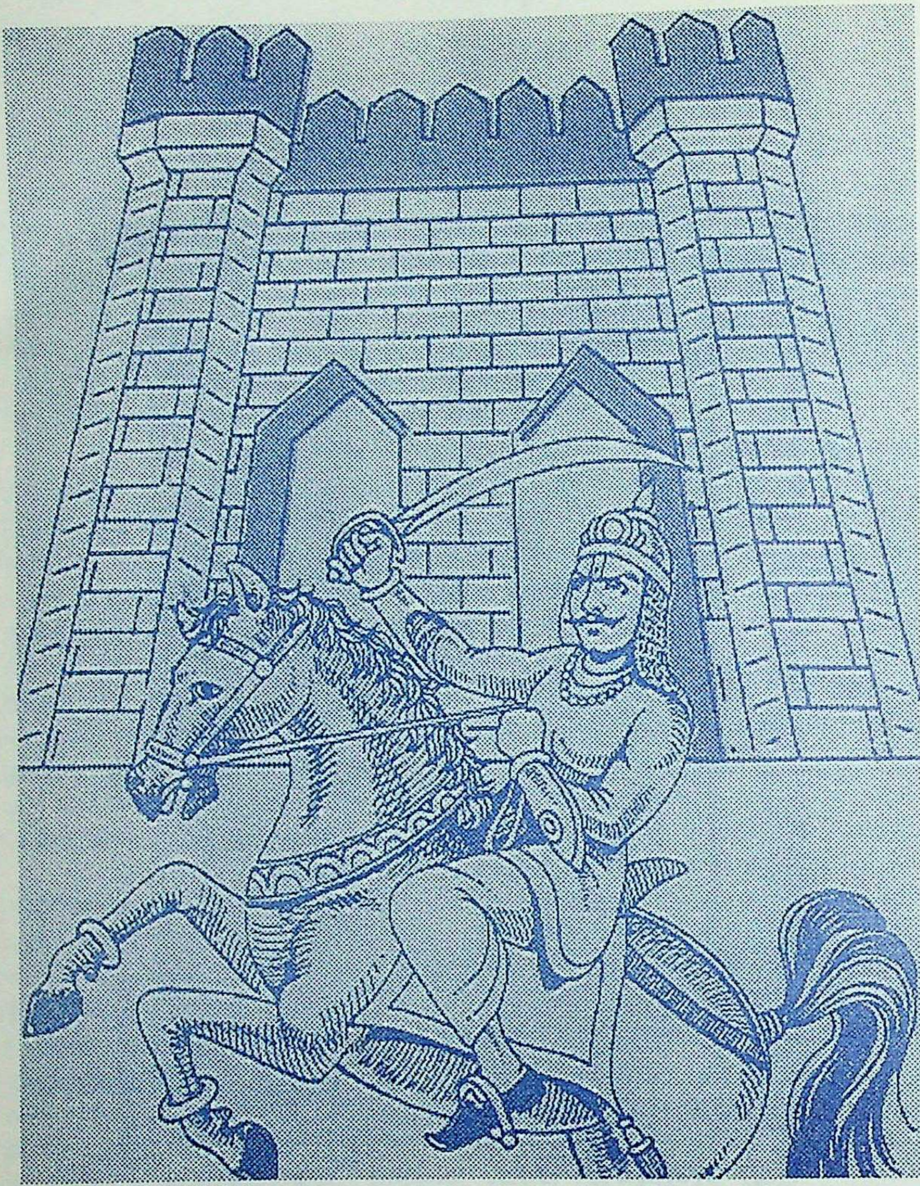

वीर राजा सातन पासी – सचानकोट (रामकोट), उन्नाव
दसवीं सदी

भारत की व्यवस्था में पासी समाज की अस्मिता

✍ के० के० रावत

समाज की इकाई व्यक्ति है और व्यक्ति एक कौम (जाति) से जुड़ा हुआ है। कौम के लोगों का अपने होनहार के मुत्तालिक एक विश्वास या कल्पना रही है। यह विश्वास हर एक के अन्दर एक हद तक उसके हक़ में सच्चा है। हमारी कौम एक पुरानी कौम है। इसमें पुरानी संस्कृति की झलक देखने को मिलती है, हमारी क़ौमी यादें उस जमाने में ले जाती हैं, जब इतिहास की शुरूआत हुई थी। कोई कौम ऐसी नहीं है जो तबदील न होती रहती हो, बराबर औरों से घुलती–मिलती और बदलती रहती है। यह भी देखा गया है, मुर्दा दिखाई देते हुए इस तरह उठ जाती हैं जैसे कोई नई जाति, या पुरानी का नया रूप हो। पुराने और नए लोगों में रिश्ता बिल्कुल टूट सकता है, और यह भी होता है कि विचार और आदर्शों की नई डोर मज़बूत कड़ियों में उन्हें जोड़ती रहे।

पासी भारत के मूल निवासी हैं। साहस, वीरता और बलिदान में आगे रहे, अपने आत्म–सम्मान की सदैव रक्षा की। विदेशी आक्रंताओं ने इनकी निश्च्छलता का भरपूर लाभ उठाया। खानाबदोश आर्य सप्तसिन्ध और पंजाब में आए तो इनके पास न निश्चित समाज व्यवस्था, न विधिवत् धर्म, न साहित्य, न कला, केवल अपने साथ एक वर्गीकरण लाए। आर्यो ने मूल निवासियों को अनार्य, असुर कहा। उस समय सिंध और पंजाब में एक निराली उच्च्व कोटि की प्रागैतिहासिक सभ्यता मौजूद थी। उस प्रागैतिहासिक युग में पंचनंद वासी मूल निवासी "प्रागैतिहासियों" को "प्रासी" कहा जाता था। कालांतर में प्रासी – **'पासी'** कहलाए। इस बात की पुष्टि इससे भी होती है कि *अर्लीविजेटेरियन* अवस्था में रस्सियों के पाशों (फंदों) से बनाये औजारों के प्रयोग करने वाले *'पाशी'* कहलाए। आर्यो ने मूल निवासियों की सुन्दर, विकसित सभ्यता को नाना प्रकार की कुटिलचालों, लड़ाइयों से शक्तिहीन बनाकर अपने कब्ज़े में कर लिया। प्रागैतिहासियों को भगा दिया जो पूर्व की ओर चले गए। यही नहीं पहले 'रंगभेद' फिर 'कर्मभेद' और फिर भयंकर जाति प्रथा के बीज बो दिए। जाति भेद को समाज में खूब सींचा–पनपाया। अपने को श्रेष्ठ ब्रह्म (ब्राह्मण) की उपाधि से अलंकृत कर लिया। अब ब्राह्मण जाति में जन्म लेने मात्र से पूज्य हो गया, पास में कुछ न होते हुए **'आशीर्वाद' और 'श्राप'** जैसे दो अमोघ शस्त्रों से लैस हो गया। अनेक पौराणिक गाथाएँ, आख्यान, कथाएँ संस्कृत में रचे गए। आम जनता की समझ से अलग। जनता की भाषाएँ प्राकृत, पाली, मागध या अन्य लोक भाषाएँ थीं। शिशु के गर्भावस्था से लेकर मरने के बाद अंतिम संस्कार ब्राह्मण ही करा सकता है यही नहीं अंतिम संस्कार के बाद श्राद्ध। मानव जीवन के साथ आर्य/ब्राह्मण

१६ संस्कारों के रूप में भूत की तरह जुड़ गया। भारतीय समाज आर्य ब्राह्मणों का बंधुआ हो गया। प्रागैतिहासी वासी पाशियों (पासियों) ने इनकी सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवस्था को न अपनाया, न इन्हें पास फटकने दिया। पासियों ने अपने सामाजिक जीवन में ब्राह्मणवाद के वर्चस्व को नहीं स्वीकारा। आर्य जातीयता के जाल को मजबूत करते रहे और मूल निवासियों के एक चौथाई समाज को नीच एवं पद दलित शुद्र बना डाला। अधम से अधम प्रथा की घोषणा की। कुत्ते–बिल्ली को दुलराया जा सकता था पर अनार्य शुद्रों को नहीं। इन्हीं में प्रागैतिहासी, मूल निवासी प्रासी (पासी) को भी रखा गया जो ब्राह्मण परम्परा से अलग अपनी सामाजिक व्यवस्था चला रहे थे। जातीय जटिलता के अत्याचार से त्राहि–त्राहि कर रही जनता को जैन, बौद्ध धर्म ने मुक्ति दिलाई। आनन–फानन झुंड के झुंड शुद्रों ने जैन, बौद्ध धर्म को स्वीकारा। जैन, बौद्ध भिक्षु बनते ही हिन्दू अछूत पूज्य हो गए। पर वाह रे पासी जाति अत्याचारों की पीड़ा से कराहती रही पर धर्म परिवर्तन नहीं किया, अपनी **आदि** परम्परा से डिगी नहीं। सन् ७११ ई० में अरबों के आक्रमण से इस्लाम का प्रवेश सिंध और पंजाब में हुआ। इस्लामीकरण की आँधी भारत में चली, जिसकी मुख्य शिकार निम्न जातियाँ हुई। पासी समुदाय लड़ाईयाँ लड़ते हुए अडिग बना रहा, इनको शक्तिहीन करके कुचला जाने लगा, नाना प्रकार के अत्याचारों को सहते रहे पर इस्लाम को स्वीकार नहीं किया। सभी जातियों ने इस्लाम शासकों से समझौता किया पर पासी कौम ने समझौता नहीं किया। एक बार फिर बेघरबार होना पड़ा। इस प्रागैतिहासिक पासी जाति ने भारत भूमि पर बाहरी लोगों को कभी मान्यता नहीं दी। एक बात यह भी है कि जैन, बौद्ध के उत्थान के कारण आर्यवंशीय ब्राह्मणों का ब्राह्मणवाद प्रायः समाप्ति के कगार पर था। उसको मुसलमानों के आने से आगे बढ़ने का मौका मिल गया। अंग्रेज भारत में ईस्ट इंडिया कम्पनी बनाकर व्यापार करने आए, पर शासक बन बैठे और काले–गोरे का भेद पैदा किया। बड़ी दूरदर्शिता से सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और शैक्षिक व जनता की मानसिकता का अध्ययन बड़ी बारीकी से किया। यहाँ भी पासी जाति इनके सामने आई, जो मूल रूप से भयंकर विरोधी थी। अंग्रेजों ने पासी जाति का सभी क्षेत्रों में शोषण किया और मानसिकता को बुरी तरह कुचला। पासी राजाओं/सरदारों को शक्तिहीन करके किलों/गढ़ों को मटियामेट किया। पासी जाति अपनी कट्टरता के लिए खड़ी रही, घरबार छोड़ कर जंगलों में चले गए। ईसाईकरण की आँधी से अपनी रक्षा करते रहे, अडिग रहे। जरायमपेशा एक्ट पासी जाति पर लागू कर दिया गया। यह फिर भी बेकाबू रही तो ***'रिक्लेमेशन डिपार्टमेंट'*** खोला गया और अंग्रेजों ने पासी प्रथाओं को मानते हुए **'पासी पंचायत प्रणाली'** की मान्यता शासन में की। पासी जाति को जरायमपेशा से सशर्त मुक्ति आजादी के बाद मिली, पर सवर्ण आज भी सशंकित हैं, पूरी तरह से पासी समाज को अग्रसर होने के अवसर देना मंजूर नहीं है।

आज फिर पासी समाज चौराहे पर खड़ा अपनी दिशा को देख रहा है, गुमराही के अंधकार से निकलना चाह रहा है। अपने अतीत के गौरव को पुनः पाने के आधार की ओर टकटकी

लगाए देख रहा है। निराशा–आशा का द्वन्द लिए निस्पंदन गति से रोशनी को निहार रहा है। असीम मानसिक वेदना से छटपटा रहा है। पर इसका सही समाधान क्या है?

हम पूरे उत्साह के साथ समाज के लोगों को जाग्रत करें, जो सामाजिक विकास को सही रूप से समझें। सामाजिक विकास की प्रक्रिया को हृदयंगम कर सकें, जो अंधकार युग से अब तक हुई हैं। **हमारे दिल-दिमाग में जो दूसरे की तस्वीर रहती है इसे निकालना होगा। अपनी बोतल से दूसरे की दवा फेंकनी होगी। हमारी आँखों को अपने यहाँ की परिस्थितियों को देखने का अभ्यस्त करना होगा। आज अतीत के गौरव को सच्चाई से बताना होगा। जातीय अभाव की कमी को दूर करना होगा। कुचली मानसिक चेतना को जागृत करके भावनात्मकता को बढ़ाया जाए जिससे आने वाले युग की पीढ़ी में इतना साहस हो कि हर बात को विवेक की कसौटी पर कस सके।** अब संप्रदायों के दायरे में रहने से काम नहीं चलेगा। समाज को रचनात्मक शक्ति से सम्पन्न बनाना होगा। अतः अपने समाज को साफ–सुथरा बनाने के अभियान को सफल बनाने के लिए आइये हम सब कमर कस लें, और ***पासी सामाजिक सेवा संस्थान*** की नींव को मजबूत करें।

जो भरा नहीं है भावों में बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं पत्थर है, जिसमें स्वजाति का प्यार नहीं।।
जिसको न निज गौरव, न निज जाति का अभिमान है।
वह नर नहीं पशु है, निरा मृतक समान है।।

आर्यो के आगमन के पूर्व भारत में कोई जाति नहीं थी, जब से यहाँ आर्य आए तो जाति व्यवस्था की शुरुवात हुई है। प्राक्-आर्य भारत के कबीले होते थे, किन्तु जाति व्यवस्था नहीं थी। आर्यो ने चार वर्णो की व्यवस्था की। उसके बाद ई.पू. 150 वर्ष शुंगकालीन मनुस्मृति ने 17 जातियों की कल्पना की। बाद में हजारों जातियों की उत्पत्ति हुई। डा० बाबा साहब का कथन सत्य है कि जाति वर्ग विहीन समाज की स्थापना के बगैर स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं है।

—सारिपुत प्रकाशन, बम्बई (मुंबई)-74

उत्कृष्ट सभ्यता की स्थापना के लिये, निम्न जातियों के सदस्यों ने अत्यंत आवश्यक शर्त को पूरा किया। केवल वे ही विकास के लिये अनिवार्य रुप से अपेक्षित यौंत्रिक साधनों की कमी को पूरा कर सके। यह कहना गलत न होगा कि मानव सभ्यंता के विकास के प्रथम् चरण में वफ़ादार जानवरों की अपेक्षा निम्न जातियों के सदस्यों का उपयोग कहीं अधिक किया गया। पराजित जातियों के मनुष्यों को दासों के रुप में इस्तेमाल करने के बाद बाह्य आक्रमणकारियों ने उनके स्थान पर पशुओं का प्रयोग किया। सबसे पहले हल चलाने वाला पराजित शत्रु था और बाद में बैल तथा घोड़े ने उसका स्थान ग्रहण किया।

--अडोल्फ हिटलर-म्या कैम्फ

साहित्य एक आवश्यकता

५० वर्षों में मूल समाजों का साहित्य

के० के० रावत

कोई भी साहित्यिक सम्मेलन बड़ा ही अनूठा होता है। क्योंकि साहित्य की अनेक विधाओं के संगम के साथ ही विभिन्न संस्कृतियों का भी संगम होता है। वैसे देखा जाए तो उत्तर प्रदेश स्वयं में ही संगम स्थली है। गंगा, यमुना एवं सरस्वती नदियों के संगम के कारण त्रिवेणी नामकरण हुआ, यह अलग बात है कि सरस्वती लुप्त है या सुषुप्ता अवस्था में है। ठीक उसी प्रकार जैसे तीन नाड़ियों इंगला, पिंगला और सुषुम्ना मस्तिष्क के जिस केन्द्र पर मिलती हैं उसे ६वाँ आज्ञा चक्र कहते हैं, वहाँ पर सुषुम्ना भी सरस्वती की भांति सुषुप्त अवस्था में है। इस विलुप्त सरस्वती का मिलन साहित्य की देन है। यही नहीं पंचनद–सतलज, रावी, व्यास, चुनाब झेलम के बीच ऋगवेदिक कालीन "सरस्वती तीरे" का दर्शन साहित्य में ही होता है। साहित्यों और यथार्थताओं के परिवेश में उत्तर प्रदेश एक विशिष्ट स्थान पर दिखाई देता है।

संगम चाहे गंगा, यमुना, सरस्वती का हो, चाहे घाघरा शारदा का हो, राप्ती बूढ़ी गण्डक की अन्य नदियों से जलायमान गोरखपुर का हो, या फिर मैनच क्षेत्र में गोमती की इठलाती चालों के बीच बसे जौनपुर का हो। इन सब नदियों के जल को उत्तर–पश्चिम से सूरज अपने प्रकाश से संचित कर, संगम स्थली की ओर प्रवाहित करता है। आज साहित्य की धारा उत्तर–पश्चिम से निकल कर लखनऊ की गंगा–जमुनी संस्कृति में विराम लेती जौनपुरी कजरी, लावनियों की संस्कृतियों को समाहित करती हुई पूर्वांचल गोरखपुर होती हुई अरूणाचल तक पहुँच गई है। इस साहित्यिक धारा का प्रभाव आज नहीं तो आने वाले समय में हमारे उत्तरी भारत में सर्वत्र दिखाई देगा। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारे दलित साहित्यकारों द्वारा सृजित साहित्य की स्थिति क्या है? प्रश्न इसका नहीं है, प्रश्न है कि हमारी मौजूदा स्थिति में मूल समाजों की साहित्यिक पैठ कितनी है। हम यह भी नहीं कह सकते हैं कि हमारे मूल वर्गों में साहित्यकारों, गीतकारों की कमी है, सुन्दर विचार हैं, सुदृढ़ आत्म विश्वास है, यदि कमी है तो आर्थिक स्तर की और अन्य वर्गों के बीच सम्मान की।

आजादी के पूर्व भारतवर्ष में विभिन्न संस्कृतियों के साथ, अरबी, उर्दू, फारसी, फ्रांसीसी, पश्तो एवं अंग्रेजी आदि भाषाओं का पदार्पण हुआ, जिन्होंने यहाँ की प्रचलित पाली, कैथी, हिन्दी, संस्कृत आदि भाषाओं को प्रभावित ही नहीं छिन्न–भिन्न किया। बाहरी आंक्रताओं ने मूल जातियों के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को नेस्तनाबूद करके अपने वर्चस्व का गुणगान

अपनी–अपनी भाषाओं में लिपिबद्ध किया। नियमों, उप नियमों को अपने तरीके से लिखकर मूल जातियों (जिनको अब दलित की संज्ञा दी गई है) के ऊपर लादा। पढ़ने, शिक्षा ग्रहण करने के लिए भी इनको प्रतिबंधित कर दिया था। सबल व प्रथम वर्ग ने शैक्षिक धुरी की कुंजी सदैव अपने पास रखी। पढ़ना–लिखना तो दूर वेद–मंत्रों की ध्वनि भी निम्न वर्ग के कानों में पड़ जाने पर रोक लगी थी यदि कहीं मालूम हो गया कि ध्वनि की गूंज कानों से लगी है तो सीसा पिघला कर छोड़ दिया जाता था, इस बात से सभी परिचित हैं,ऐसा मनुस्मृति में समाज के अन्य वर्गों को निर्देशित किया है।

समय ने करवट ली, हमारे निम्न वर्गो में कठिनाइयों, यातनाओं, कष्टों के बीच शिक्षा का प्रचार–प्रसार हुआ। सही–गलत समझने और प्रथम/सबल वर्गो के यथार्थ रूप व कुटिल चालों की जानकारी को ज्ञान की कसौटी पर कसने का मौका हाथ में आया। धीरे–धीरे शैक्षिक प्रकाश की किरण फैलती रही। निम्न वर्गो के विद्वानों, साहित्यकारों के विचार सामने आने लगे। **बाबा साहब की लेखनी से, मनमाने ढंग से लिखें गए व्याख्यानों के महलों में दरारें पड़ने लगीं। कहे जाने वाली *''दलित साहित्यिक क्रांति''* का भविष्य देखकर विशेष वर्ग के साहित्यिक मठाधीशों का अपना भविष्य अंधकारमय दिखने लगा। खलबलाहट मची, सोच में तुरंत बदलाव उत्पन्न किया गया।** अनुसूचित जाति/जनजाति, पिछड़ी जातियाँ (निम्न वर्गो) के द्वारा रचित साहित्यों की अवहेलना करके, स्वनाम धन्यः के आधार पर रचित पुस्तकों – वेदों, पुराणों, उपनिषदों, स्मृतियों आदि ग्रंथों की दुहाई खींचने लगे और इन ग्रंथों को ईश्वरीय वाणी की संज्ञा दी गई। यदि इनके यथार्थ रूप का वर्णन या व्याख्या की जाती है तो उसे धर्म विरोधी, अज्ञानी, मूर्ख की उपाधियों से विभूषित किया जाता है। उदाहरणार्थ, जो शायद सभी को पता है कि हमारे प्रकांड विद्वान ज्योतिषाचार्य रजनीकांत शास्त्री जी की *''हिन्दू जाति का उत्थान और पतन''* नामक प्रसिद्ध पुस्तक सन १९४० में प्रकाशित हुई तो तहलका मच गया। क्योंकि मूल वर्गो को, फैली भ्रांतियों को दूर करने का एक अमोघ शस्त्र मिल गया। पर प्रथम वर्ग के कट्टरपंथी साहित्यिक मठाधीशों ने अपनी गिरती साख को देख कर हमारे विद्वान ज्योतिषाचार्य को पारा तक पिलाने से न चूके।

जहाँ तक मैं समझ पाया हूँ उसका नतीजा यह है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जिस प्रकार से निम्न वर्गो के द्वारा सृजित साहित्य को दबाया गया है उसे कोई मान्यता नहीं दी गई है। अच्छे से अच्छे साहित्य को हासिये पर रखा गया है। हमारे साहित्य को जातिवादी कहा जाता है तो क्या मनुवादी साहित्य ब्राह्मणवादी जातिवादी साहित्य नहीं है। **हमारे बाबा डा० भीम राव अम्बेडकर का कितना और कौन सा साहित्य विद्यालयों के, विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में जोड़ा गया है। जहाँ उच्च वर्ग की महिमा में कमी शुरू हुई तब स्वार्थवश या राजनैतिक स्वार्थवश एक या दो पंक्तियों में मान्यता दी गई है।** हमारे साहित्यकारों को दलित साहित्यकार, कहीं अवर्ण साहित्यकार, साहित्य को दलित साहित्य, जातिवादी साहित्य आदि नामकरण संज्ञाओं से पुकारा जाता है। मेरी समझ से परे है कि यह दलित शब्द कहाँ से घुस आया, क्योंकि **साहित्य कभी भी दलित नहीं हो**

सकता है। हम किसको दलित मानते हैं? यदि हम सब दलित कहलाने वालों के द्वारा सृजित साहित्य, दलित साहित्य है तो रैदास, कबीर और हमारे प्रणेता डा० भीम राव अम्बेडकर द्वारा सृजित साहित्य, लेखन कार्य भी दलित साहित्य है। दलित और दरिद्रों में क्या फर्क है? विप्र अपने को दरिद्र कहते नहीं अघाते हैं माँगने को बुरा नहीं समझते, भले ही वह हर प्रकार से सम्पन्न हों। उनके द्वारा रचित साहित्य चाहे कम स्तर का ही क्यों न हो उसे पूरी मान्यता दी जाती है। यदि हमारे द्वारा सृजित साहित्य दलित है तो दरिद्र रूप धारण करने वालों द्वारा सृजित साहित्य दरिद्र साहित्य है। **साहित्यकार अपनी लेखनी द्वारा सूक्ष्म को इनलार्ज करके वास्तविकता के रंग भरता है, इसलिए साहित्यकार साहित्यकार होता है न तो वह अवर्ण होता है ना ही सवर्ण। यह भेद पैदा करके वैदिक वर्ण व्यवस्था की चादर हम सबको उढ़ाई जाती है।**

आज स्थितियाँ विघटन को बढ़ावा दे रही हैं, अवमूल्य का प्रसार हो रहा है, अराजकता मनुष्य का स्वभाव बनने जा रही हो, निराशाजनक और अराजक वातावरण में जहाँ राजनीति, धर्म, दर्शन और आत्मीयता, आध्यात्म, आपसी बैर और अलगाववाद को उभारने में लगे हों। इन विषम परिस्थितियों में साहित्य की अनिवार्यता एक जरूरत हो गई है। क्योंकि साहित्य समाज और मनुष्य को बेहतर बनाता है। ऐसे में साहित्य की ओर से ही आशा की किरणें दिखाई देती हैं। यह भी सच है कि साहित्य साम्प्रदायिकता, आतंकवाद और व्यवस्था में जन्मे अराजक तत्वों, आतंक–अन्याय की लम्बी परछाइयों की लम्बी कतारों के सामने सीधी मुठभेड़ करने में असमर्थ है। परन्तु इन सबके विरोध का वातावरण बनाने में साहित्य की कारगर भूमिका हो सकती है। **अंधकार से प्रकाश की ओर और अवमूल्यों से मूल्यों की ओर ले जाने की दृष्टि से साहित्य भविष्य में हमेशा प्रासंगिक रहेगा। भौतिक सम्पन्ता से उत्पन्न आंतरिक जड़ता, वृत्तियों का चांचल्य हमारी चमड़ी को कोकीन के इंजेक्शन की तरह संवेदनशून्य बना रही है। इनको रोकने का काम साहित्य ही बाखूबी करेगा। प्राद्योगिक स्तर पर होने वाले परिवर्तन साहित्य को विचलित भी करते हैं। लेकिन फेंकने या क्षति पहुँचाने की स्थिति में नहीं हैं।** इसका कारण भी साफ है कि साहित्य समकालीन नई चुनौतियों को अपनाने में समाहित करने की सामर्थ्य रखता है। ज्वलंत प्रश्नों से टकारने का हौसला रखता है। समय के अनुरूप बदलने की क्षमता रखता है और नया बनाए रखता है।

कम्प्यूटर- में भर दो गीत और तरन्नुम
युग आने वाला है यंत्र गीतकारों का।

आज अमानवीय तत्वों से जूझ रहे मनुष्य का सहचर साहित्य है और विसंगतियाँ जितनी प्रबल होंगी भविष्य का साहित्य उतना ही जुझारू और ताकतवर होगा।

बौद्धिक क्रांति के बिना अन्य किसी प्रकार की क्रांति हो ही नहीं सकती और इसके लिये साहित्यकारों व पत्रकारों का सहयांग अनिवार्य है। *-सम्पादक पर्षद*

अमर शहीद वीर शिरोमणि राजा गंगाबक्स रावत का जीवन वृत्त

के. के. रावत की पुस्तक "अवधविलीनीकरण के पूर्व" से उद्धृत

✍ **श्रीमती सुनीता रावत,** एम.एस सी., बी.एड

कासिमगंज (देवा के पूरब) बाराबंकी के खुम्भा रावत पासी जाति के थे। इनके पाँच पुत्र, कुंदी सिंह रावत, बख़्ता सिंह रावत, अलम सिंह रावत, लाल सहाय रावत तथा मिश्री सिंह रावत थे। खुम्भा रावत के प्रपौत्र गंगाबक्स ने दो सौ गाँवों पर विजयश्री प्राप्त करके अपना पासी राज्य स्थापित किया और चारों ओर ६० मील की परिधि में ८० किले/गढ़ियाँ स्थापित कीं, जिनमें पासी सरदार रहते थे। २५ फरवरी सन् १८४८ को आमिल दर्शन सिंह ने अपने पत्र द्वारा गंगा बक्स रावत मालगुजारी न देने की शिकायत बादशाह वाज़िद अली शाह से की थी।

लॉर्ड डलहौजी ने अवध को हड़पने की नियत से कर्नल स्लीमैन की नियुक्ति ११ जनवरी १८४६ को लखनऊ में रेजीडेंट के पद पर की थी। कर्नल स्लीमैन को प्राथमिक सूचनाओं से यह ज्ञात हो गया था कि अवध के बादशाह के सहयोगी पासी राजाओं/सरदारों के आधिपत्य को बगैर नेस्तानाबूद किए अवध को हड़पा नहीं जा सकता है। बादशाह वाजिद अली शाह की इच्छा के विरूद्ध कर्नल स्लीमैन ने अवध की सामाजिक/सामरिक शक्तियों का आद्योपान्त अध्ययन करने के लिए पासी बाहुल्य क्षेत्रों के दौरे का कार्यक्रम बनाया था।

१ दिसम्बर १८४६ को दौरे का कार्यक्रम शुरू हुआ। बूढ़े राजा बख़्तावर सिंह इसके मार्गदर्शक नियुक्त किए गए थे। दौरा चिनहट से शुरू होकर नवाबगंज, बहराइच, गोण्डा, फैजाबाद, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, सलोन, सफीपुर, मल्लावां, साण्डी शाहाबाद, खैराबाद, बारी, बिसवाँ, देवाँ, दरियाबाद, सिद्धौर से होता हुआ चिनहट में समाप्त हुआ।

स्लीमैन ने पासी राजा गंगा बक्स के कासिम गंज बेहटई व भेटई (मन्मतपुर) के सुदृढ़ किलों को देखकर उनको मटियामेट करने की योजना बिना ब्रिटिश सरकार की अनुमति के बना ली थी। योजनानुसार २६ मार्च १८५० को कैप्टन बारलो, ब्यालू व विल्सन तथा लेफ्टिनेंट एल्डरटोन सहित सात हजार अंग्रेज सैनिकों की फौज़ २० तापों से लैस होकर पासी राजा गंगा बक्स के किले पर हमला कर दिया। लगातार दो दिन तक अंग्रेजी सेनाएँ राजा गंगा बक्स रावत के किले पर भयंकर गोलीबारी करती रहीं परन्तु किले को कोई क्षति नहीं पहुँचा पायीं।

२६ मार्च १८५० को भरी दोपहरी में पासियों की एक टुकड़ी बांसों का फाटक खोल कर अचानक बाहर आई और हताश अंग्रेजी सेना पर टूट पड़ी। अंग्रेजी सेना में भगदड़ मच गई। इस बीच मौका पाकर एल्डरटोन व विल्सन अपने कुछ सैनिकों के साथ फाटक के अन्दर घुस गए। पासी तीरंदाज़ सेनिकों की तीरों की बौछार में एक तीर एल्डरटोन की गर्दन में लगा। गर्दन कट कर दूर जा गिरी। अंग्रेजों की ६ पाउन्डर गन व युद्ध सामग्री लेकर पासी सैनिक गुप्त रास्ते से चले गए। किसी तरह फाटक खोल कर अंग्रेज सेना नायकों ने एल्डरटोन की लाश क० स्लीमैन के पास लखनऊ भेजी और भारी कुमुक सहायतार्थ माँगी थी।

बहुत खोज ख़बर के बाद भी अंग्रेज राजा गंगा बक्स रावत का पता नहीं लगा पाए– गुस्से में कासिम गंज के किले को मटियामेट कर दिया। राजा गंगा बक्स रावत को पकड़ने के लिए वाज़िद अली शाह से क० स्लीमैन ने जबरदस्ती ईनाम की घोषणा करवायी। बर्खास्त वज़ीर के अण्डर सेक्रेटरी वसीह अली ख़ाँ को बहाली का लालच देकर गिरफ़्तारी के लिए भेजा गया। वसीह अली ख़ाँ ने राजा गंगा बक्स रावत को विश्वास दिलाने के लिए पवित्र कुरान की कसम खाई कि बादशाह को आपसे कोई शिक़ायत वह आपसे मित्रवत् मिलना चाहते हैं। राजा गंगा बक्स रावत के अभिन्न मित्र सरदार भूरे ख़ाँ ने वसीह अली ख़ाँ की कसम पर विश्वास न करने को कहा।

राजा गंगा बक्स ने पवित्र कुरान की कसम पर शक करने से इन्कार कर दिया और २५ अगस्त १८५० दिन गुरूवार को अपने पुत्र रंजीत कुमार सिंह रावत के साथ बादशाह से मिलने चल पड़े। वसीह अली ख़ाँ ने विश्वासघात करके राजा गंगा बक्स रावत एवं उनके पुत्र रंजीत कुमार सिंह रावत के लखनऊ आगमन की सूचना अंग्रेज रेज़ीडेंट को दे दी जिसने सामरिक दृष्टि से ठीक ईद के दिन २६ अगस्त १८५० को हजारों अंग्रेज सैनिकों के साथ घेर कर पकड़ लिया। १८ सितंबर १८५० को पिता–पुत्र दोनों का सर अंग्रेजों ने कलम कर दिया। भूरे खाँ अपने साथियों के साथ बचाने के लिए लखनऊ पहुँचा परन्तु तब तक देर हो चुकी थी। लखनऊ में एक नाले के किनारे इन वीरों का सर कलम किया गया था। तभी से इस नाले का नाम ***सरकटा नाला*** पड़ा।

वसीह अली ख़ाँ ने कुरान की कसम का अपमान किया और अल्लाह ताला का कहर उस पर टूटा। राजा गंगा बक्स रावत के क़त्ल के बाद वसीह अली ख़ाँ के गले के नीचे एक भी निवाला नहीं उतरा और वह तड़प–तड़प कर मर गया।

संदर्भित पुस्तकें: जर्नी थ्रू दि किंगडम ऑफ अवध वॉल० १ व २–*लेखक* सर डबल्यू.एच. स्लीमन, अवध अन्डर वाजिद अली शाह–*लेखक* प्रो. जी.डी. भटनागर (बी.एच.यू.), इकॉइटी इन इक्सेलसिस– *लेखक* मेजर बर्ड. अनुवादक अवध की लूट– राजेन्द्र पाण्डे, वाजिद अली शाह और अवध का पतन–*लेखक* परिपूर्णानन्द वर्मा।

पिछड़ी/अनुसूचित, जाति/जनजाति क्यों?

मूल या आदि जाति क्यों नहीं?

✍ के० के० रावत

हिन्दुस्तान या भारतवर्ष का पौराणिक इतिहास ऋगवेद काल की कंठस्थ की गई ऋचाओं/मंत्रों को आधार बनाकर लिपिबद्ध किया गया है। लिपिबद्ध करते समय सुनी–सुनाई किवदंतियों को भी अत्यंत महत्वपूर्ण बनाया गया है। प्रचलित/मान्य पौराणिक इतिहास पर एक विहंगम दृष्टि डालनें पर उस समय की सामाजिक एवं सांस्कृतिक दशाओं का ज्ञान सहज ही हो जाता है, जिनमें आक्रमणकारी जिन उद्देश्यों से आये उनका विशद वर्णन देखने को मिलता है। क्योंकि पुरातनता के कोहरे में आदि भारतीय समाजों की उत्तपत्ति विलुप्त हो गई है। केवल आगन्तुकों की महात्वाकांक्षी प्रवृत्ति/मनोवृत्तियों का बखान दिखलाई देता है। यहीं नहीं उनकी बर्बरता पूर्ण कहानी भी पढ़ी जा सकती है। ऋगवेद के श्लोकों/मंत्रों की रचना के समय आर्यो ने अपना निवास सतलज, सरस्वती, जमुना के बीच में बताया और अपनी सुदढ़ता को हर प्रकार से सुरक्षित किया है।

भारत की शस्य–श्यामल भूमि को अधिग्रहण करने की लालसा में आर्यो ने यहाँ के मूल निवासियों को रौंदना शुरू किया, तो कड़े प्रतिरोध का सामना करना पड़ा था। मूल निवासी अपनी संस्कृति की रक्षार्थ अपने को स्वाहा भी किया। निरंतर आक्रमणों के थपेड़ों से कमजोर होकर पीछे हटते गए! आज का अधिकांश वर्ग इस बात को स्वीकार करता है कि मूल जातियां, जिनको अनुसूचित जाति/जनजाति के नाम से जाना जाता है भारत की आदि निवासनी जातियाँ हैं जो एक समय में पूरे देश की लम्बाई चौड़ाई में फैली हुयी थीं। समय के साथ जब दूसरे बाहरी लोग अपनें दलों के साथ यहां पहुंचे तो इनको धीरे–धीरे पीछे हटना पड़ा और यह जंगल रूपी किलों में शरण लेनें को बाध्य हो गये। प्रथम आर्यो ने इनके वर्चस्व की बखिया उधेड़ कर इनके सामाजिक, सामरिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को तहस नहस कर डाला। यह कहना गलत नहीं होगा कि मूल भारतीय जातियों को वर्गीकृत आर्यो ने अपने से अलग एक निम्न वर्ग के रूप में घोषित किया। क्यों कि आने वालों के पास न तो निश्चित व्यवस्था थी, न निश्चित धर्म था, न निश्चित सामाजिक/सांस्कृतिक विरासत थी, न स्थिरता थी। केवल एक वर्गीकरण था। यहां के मूल निवासियों की विकसित सभ्यता पर अपनी मोहर लगा कर इनको अनार्य, असुर, राक्षस, दैत्य, अस्पृश्य आदि की श्रेणी में रखकर विभूषित किया। स्वयं सुर, देव बनकर परम्परागत कुलीन बन गये। यह कार्यकम शताब्दियों क्या,

युगों से बराबर बड़ी सुनियोजित कट्टरता से चला आ रहा है। यहां तक कि मूल निवासी अपनी मूलतः पर ही विश्वास करनें के काबिल न रह गये। आज बीते युग की आकान्ताओं की कल्पनाओं को सुदृढ़ सामाजिक संरचनाओं के मजबूत जाल में जकड़कर भारतीय जन मानस में फैला दिया गया है।

भारत की मूल जातियाँ अनेको प्रकार के अंधड़ो के बीच में फँसी आज भी कराह रही है। कयों? किसलिये? इसका दायित्व किन वर्ग के लोगों पर आता है। बाहरी आक्रमणों से त्रस्त, इस्लामीकरण की आँधी से झंझावत हुए मूल समाज उभर न पाए थे कि इन पर जाति प्रथा का काला लबादा उढ़ा कर इनकी अस्मिता को नेस्तानाबूत किया गया। मूल से शरणार्थी बन गए। जहाँ भी सिर उठाया वहीं सुनिश्चित ढंग से इनको रसातल में ढकेलने का कार्य शुरू किया गया। ईसाईकरण व अंग्रेजी परम्परा के फैलाव के समय भी इनका विकास न हो इसका पूरा ध्याान रखा गया। आजाद भारत में भी धर्मावलम्बियों की सहायता से सुधार नामक नाटक का प्रदर्शन हुआ पर नेपथ्य में स्थिति ज्यों की त्यों रही। इनकी मानसिकता को गिरवी रखने वाला खेल आज भी बड़ी चतुराई से खेला जा रहा है।

देश में मूल रूप से रहने वाले आज दोहरे मापदण्ड में रह रहे हैं। कभी यह चारों ओर फैले थे, इनका आधिपत्य भी था। इनकी अपनी संस्कृति थी। इनकी अपनी भूमि थी जिस पर खेती करते थे। निश्चल भावों को लिए हर मूल समुदायों से अपनत्व के संबन्ध थे, आदि। पर आज उन्हीं मूल समाजों के स्तर को ऊँचा उठाने, शिक्षित बनाने की योजनाएँ बनाई जा रही हैं जबकि योजनाओं से गरीबी बढ़ती है और कागजों पर रेखांकित गरीबी रेखा की लम्बाई कम होती है। वैदिक, ऋग वैदिक युगों की बात तो अलग ही थी पर आज भी साहित्यिक क्षेत्रों में या ऐतिहासिक मूल्यों की कतारों में इनको नकारा जाता है। इसका विशेष ध्यान रखा जाता है कि ये किसी भी प्रकार उज्जवल प्रकाश में दिखाई न दें। मूल समाजों के अंतर्गत आने वाले समाजों को पिछड़ा, उपेक्षित वर्ग, अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में बाँट कर, ऋगवैदिक परम्पराओं से लैसकर आधुनिक ढंग से निरूपित किया गया है। विकास, पिछड़ापन हटाने के लिए तरह–तरह के अनुदान, आरक्षण मुहैया कराया गया है पर वास्तुविकता कितनी और क्या है ये सभी जानते हैं?

संविधान की धारा ४६(४) में जनता के पिछड़े वर्गो विशेषतः अनुसूचित जाति और जनजाति के शैक्षिक और आर्थिक हितों पर विशेष ध्यान देने के लिए भारतीय सरकार को निर्देश दिया गया है। सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से इनकी रक्षा करनें के प्रावधान सहित, लक्ष्य प्राप्ति को ही निर्धारित किया गया है। आर्थिक सहायता और उचित निर्माण के लिये सहायता सामग्री देनें का आश्वासन भी है। सन् १९६१ में धेवर कमीशन नें अनुसूचित जन जातियों के बारें में एक विशद स्तरीय रिपोर्ट प्रस्तुत की थी। अपनें और सारे नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और

राजनैतिक न्याय तथा प्रतिष्ठा का समान अवसर देनें को भारतीय सरकार की सर्वविदित नीति के सामान्जस्य में अनेंक उपाय बनाये गये हैं। उन उपायों से कितना विकास हुआ है, अपने आप में ही ज्ञात है।

इतिहास का अनुभव मूलजातियों के सदस्यों में बहुत प्राचीनता तक नहीं जा पाता और प्रायः उसमें मिथकीय व लोक कथायें सम्मिलित हो जाती हैं। संविधान के परिच्छेद ३४२ के अनुसार राष्ट्रपति जनता की सूचना के आधार पर जातियों या जनजातियों या कुछ वर्गो को या उनके भागों को जाति अथवा जन जाति के अन्तर्गत रख सकता है जो एक राज्य से या केन्द्र शासित राज्य में अनुसूचित जाति से मानीं जायेगी। विकास के लिए ऐसा सब कुछ किया जाता है, पर हमारे मूल जातियों के प्रतिनिधियों के सुझावों को कितना माना जाता है?

सतत् विकास के लिये यह आवश्यक है कि विकास की पद्धति को सही ढंग से लागू किया जाये, साथ ही कानूनी एवं संस्थागत ढांचा तैयार करना भी आवश्यक हो जाता है जो विकास के लिये सहायक सिद्ध हो सके। कानूनी ढांचे में आवश्यक, आवश्यकतानुसार परिवर्तन करते समय आज के समाज एवं आनें वाली पीढ़ी के स्वास्थ्य को भी ध्यान में रखना पड़ेगा उसे नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिये।

सिर्फ कानून लागू करना पर्याप्त नहीं है। मुख्य रूप से आवश्यक है सामुदायिक चेतना की और संसाधनों के विकेन्द्री करण की, जिस पर समुदाय निर्भरशील हो, तथा उस समुदाय का उन संसाधनों के प्रयोग में सहमति हो। इसके लिये आवश्यक है कि जनता की अगुवाई और स्थानीय प्रजातंत्र की स्थापना। संगत सूचना तथा अन्य विशेषज्ञता के साधन जन चेतना जाग्रत कर सकते है। जन जिज्ञासा और सुनवाई इनके विकास को नया आयाम दे सकता है। विकास के लिये परिस्थिति की और अर्थनीति का समन्वय आवश्यक है। विकास का अर्थ वृहत पैमानें पर यह है कि मानव मात्र में आपसी भाईचारा हो, मानवता में आपसी समझौता हो। इन इरादों को मूर्तरूप देने के लिये एक राजनैतिक व्यवस्था तभी सफल हो सकती है जब महत्वपूर्ण मुद्दों पर जन चर्चा एवं जनमत संग्रह के साथ आम सहमति हो।

इन मूल जातियों के विकास के लिए बड़े–बड़े कदम उठाए जाते हैं, अच्छी–अच्छी योजनाओं को बनाया जाता है। पर क्या यह भी किया गया है कि इनकी मूल निवास स्थानों को इन्हें दिया गया है, इनकी जबरन छीनी गई जमीनों कों वापस किया गया है। आखिर पहले इन लोगों के पास कुछ जमीनें तो थीं, भले कम या ज्यादा, इस पहलू को उजागर नहीं किया जा रहा है, क्यों? इनके सांस्कृतिक मूल्यों को संरक्षण नहीं दिया जा रहा है। कागज़ी लकीरों के सहारे वोट की राजनीति के दायरे में, वर्ण व्यवस्था के लबादे में इनको कब तक भरमाया जाएगा, कभी हरिजन, कभी

अस्पृश्य, कभी दलित, कभी शोषित, कभी पिछड़े, कभी अनुसूचित/अनुसूचित जनजाति, कभी अवर्ण और कभी वंचित वर्गों की संज्ञाओं से क्या इनका भला होगा? अगर कुछ करना है तो इन सबको हटा कर भारत के मूल निवासियों या आदिवासियों के रूप में इनको क्यों नहीं मान्यता दी जा रही है? आज फूट डालो और राज्य करो वाली अंग्रेजी चाल को समाप्त क्यों नहीं किया जा रहा है? समसरता, सामाजिक न्याय का पहाड़ा पढ़ना बन्द होना चाहिए। इनके वास्तविक योगदानों को बराबर की मान्यता देकर, इनके सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक और सामरिक मूल्यों की रक्षा की जाए। इनको शरणार्थी न मान कर भारत के मूल बासिंदों के रूप में चिन्हित किया जाए।

यह भी जानिए

सन् 1933 में पड़ाव भभौरा थाना केसरगंज, जिला बहराइच में **ऑल इंडिया पासी पंचायत सभा** की विशाल पासी सभा की गई थी। जिसमें लखनऊ, बाराबंकी, गोण्डा, फैज़ाबाद, बहराइच, इलाहाबाद आदि के पदाधिकारियों ने भाग लिया था। इस समारोह में मि0 के. जी. टिप्सन, सुपरिन्टेंडेन्ट पुलिस, जिला बहराइच को एक मान-पत्र दिया था। इस मान-पत्र में माँगों के अतिरिक्त पासी बहादुर ***सूरज*** का भी हवाला दिया गया था।

"ज़िला बाराबंकी में एक डकैती का पता लगाने में हमारी जाति का एक भाई सूरज था, डाकुओं के हाथ से मारा गया। ईश्वर उसके अंत:करण व कुटुम्ब को शांति दे। मि0 ई.डब्लू. हंट साहब बहादुर की दयालुता का पार नही है। सूरज की मृत्यु की ख़बर पा कर आप उसकी लाश के साथ शामिल हुए, और उसकी स्त्री तथा बच्चों के लिए पेंशन तथा लड़की की शादी के खर्च का प्रबंध सरकार (गवर्नमेंट) के यहाँ से कर दिया।"

(2 जुलाई 1933 को पड़ाव भभौरा थाना कैसरगंज, जि0 बहराइच की पासी सभा में दिए गए मान-पत्र से) स्वतंत्र भारत में पासियों के योगदानों के लिए पेंशन या पुरस्कार मिलते हैं? जी हाँ! इनकाउन्टर और बलात्कार।

संकलनकर्ता - प्रमेन्द्र कुमार रावत, बी.एससी., डी.सी.ए., प्रोग्रामर

महाराजा बिजली पासी की शासन व्यवस्था

✍ बलवत राय,
एम० ए०, एलएल० बी०

महाराजा बिजली पासी का शासन अवध के वर्तमान लखनऊ जनपदीय क्षेत्र पर १२वीं शताब्दी के अंतिम चार दशकों (११६०–१२००) के बीच रहा। मध्यकालीन भारतीय इतिहास का यह संक्रमण काल था जब उत्तरी भारत से राजपूती सामंती व्यवस्था का सूर्य डगमगाता हुआ तेज गति से अस्ताचल की ओर भाग रहा था। पश्चिम में दिल्ली और अजमेर के शासक चौहान वंशीय पृथ्वीराज थे। गंगा–जमुना दोआब क्षेत्र पर कन्नौज के राजपूत राजा जयचन्द और बुन्देलखण्ड क्षेत्र पर जयचन्द के परम मित्र राजा परमर्दी का शासन था। परमर्दी शासन के दो वीर सामंत आल्हा और ऊदल थे जो सगे भाई थे। गंगा की धारा के बाएँ क्षेत्र जिसे अवध कहा जाता था पासी और भर राजाओं के आधिपत्य में था। अवध क्षेत्र के उन्नाव और हरदोई जनपदीय क्षेत्रों पर महाराजा सातन पासी सीतापुर व खीरी क्षेत्र पर राजा छीता पासी, लखनऊ जनपदीय क्षेत्र पर महाराजा बिजली पासी और रायबरेली और बहराइच, गोंडा पर भारशिव राजाओं का शासन था। अवध क्षेत्र के सभी राजे एक ही कुल के थे। महाराजा सातन और बिजली से जयचन्द ने अपना आधिपत्य कायम करने के प्रतीक स्वरूप कर की माँग की। एक फूटी कौड़ी कर के रूप में न देने पर जयचन्द ने परमर्दी द्वारा निष्कासित आल्हा ऊदल को अपने राज्याश्रय में लेकर उन्हें अवध क्षेत्र का सामंत नियुक्त कर बड़ी सेना देकर आक्रमण हेतु भेजा। इन दोंनो शक्तियों से अलग–अलग युद्ध हुए। आल्हा ऊदल को हार का मुख देखना पड़ा था। आल्हखण्ड की बाजारू प्रतियों में इनके युद्धों का वर्णन विकृत रूप में दिया गया है। मूल आल्हाखण्ड जो राजा परमर्दी के दरबारी कवि जगनिक भाट द्वारा रचित था उसमें मिलता है कि महाराजा बिजली पासी और सातन पासी समकालीन थे और जयचन्द और परमार के शासन काल में अलग शक्ति के रूप में विराजमान थे। जयचन्द ने पृथ्वीराज से बदला लेने के लिए देशघाती कदम उठाकर शहाबुद्दीन गौरी को आमंत्रण दे रखा था। जिसने पृथ्वीराज को हरा कर जयचन्द को भी मौत के घाट उतारा।

शासन व्यवस्था : जहाँ तक महाराजा बिजली की शासन व्यवस्था का प्रश्न है, उनके अधीनस्थ अन्य जातीय राजे भी थे जैसे कथवारा, कुर्मी शासक, मोहाना के मुराव आदि। इनकी शासन व्यवस्था का स्वरूप गणतंत्रीय शासन था। जो पंचायती आधार पर संचालित होता था। उस व्यवस्था को गणतंत्रीय व्यवस्था का अवशेषी रूप कहा जा सकता है। इन विभिन्न जातीय राजाओ के बीच संबंध मधुर थे। इनमें आपस में किसी भी बात को ले कर युद्ध नहीं हुए। आवश्यकता पड़ने पर एक दूसरे की सहायता को तत्पर रहते थे। ब्याह युद्ध नहीं होते थे, प्रणय सूत्र में जोर जबरदस्ती नहीं होती थी।

महाराजा बिजली की शासन व्यवस्था में गाँव, नगरों से सड़कों द्वारा जुड़े हुए थे। मार्गों का नाम व्यक्ति विशेष के नाम पर न हो कर मिलाने वाले स्थानों के नामों से इंगित किए जाते थे। एक स्थान से दूसरे स्थान को पहुँचने के लिए भटकने और पूछने की आवश्यकता कम पड़ती थी। सड़कों के किनारों पर फलदार और सायादार वृक्ष लगे हुए थे। नदियों को पार करने के लिए नावों की व्यवस्था रहती थी। कूप, वापी, बावलियाँ, पोखर आदि जल से परिपूर्ण रहते थे। राज्य की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए बिजली के १२ दुर्गों/गढ़ों की श्रंखला, कवच का कार्य करती थीं। जिनमें सेना और रसद सामग्री रहती थी। गढ़ों में भूमिगत सुरंगें थीं, दुर्गों/गढ़ों के तीनों ओर गहरी नहरें जल से परिपूर्ण रहती थीं। १२६८–१२८७ ई० के समय में बनाए गए किले/गढ़ ६वीं व १०वीं सदी के गढ़ों से मेल खाते हैं। नागरिकों पर शासन तंत्र की ओर से कोई अत्याचार नहीं होता था। नागरिक धन–धान्यपूर्ण और सुखी थे। अकाल की स्थिति नहीं आती थी।

पासी जाति मुजरिम नहीं !

6 मार्च सन् 1930 ई0 को यू0पी0 के गवर्नर हिज़ एक्सीलेन्सी सर माल्कम हेली साहब बहादुर ने फ्रेंचाइस कमेटी, आबकारी बोर्ड, दुराचार निवारिणी समिति तथा यू0पी0 आदि हिन्दू डिप्रेस्ड क्लास रजिस्टर्ड एसोसियेशन के डिपुटेशन से साफ कहा था कि- ''पासी जाति 'जरायम पेशा' की मुजरिम नहीं हो सकती है, केवल जो लोग जुर्म करेंगे वही जुर्म के मुजरिम हो सकते हैं और यही बात गवर्नमेंट क्रिमिनल एक्ट में भी साफ तौर से जाहिर है कि जरायम पेशा लोग वह हैं जो जगह-जगह मारे-मारे फिरते हैं और आज तक आबादी के अन्दर आबाद नहीं हुए हैं। यह बात होते हुए भी हमको अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि चोरी डकैती होने पर निगरानी शुदा पासियों के अलावा सारी पासी जाति के उस जगह और आस-पास के लोग बुलाये जाते हैं उन पर घोर अत्याचार किया जाता है''।

—पासी सामाजिक सेवा संस्थान द्वारा संग्रहित

मलीहाबाद संडीला के गौरव

पासी राजा सातन की कर्मभूमि एवं उनके वंशजों के कार्यकलापों की गाथा पासी समाज के लिए एक ऐतिहासिक धरोहर है। सई नदी के किनारे संचान कोट का किला अपने स्वामी की पताका आज भी फहरा रहा है, वहीं उनके वंशजों की कीर्ति गाथा, कसमण्डी, कलाखुर्द एवं कंसधर के भग्नावशेषों से चारों ओर दीप्तिमान है।

अभई चन्द
↓
रायतास
↓
सातन
↓
त्रिलोकचन्द
↓
पिरथी चन्द — हरहरदेव

राय बरेली गजेटिर के अनुसार पासी राजा सातन की वंशावली

‘नाम’

दुई भईयन के नाम, सल्हू, मल्हू, है सर नाम।
पासियों के रहने का गाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

भईयन का प्रभाव बड़ा मल्हू लगवाईन मल्लीहाट।
देखिन भईयन की बढ़ी हाट, सल्हू जमिगे सल्ली हाट।
मल्लीहाट से मलिहाबाद का नाम हुआ विख्यात।
सल्लीहाट का नाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

काकोरगढ़ में था बनाया, राजा सातन ने किला।
पुत्र त्रिलोकचन्द को गद्दीनशीनी में मिला।।
किले के मंदिर और बनी सुरंगों का था नाम।
पासियों के रहने का गाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

‘कसमण्डी’ ओ ‘कला’ खुर्द में रहते थे पासी युवराज।
‘कंसहार’ के किले में, पासी कंस बना अधिराज।।
वंशज सातन के बेता तट पर थे सरनाम।
पासियों के रहने का गाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

गाजी, हातिम, कासिम भाँजे महमूद गजनवी भी दौड़े।
तलवार हाथ में लेकर पासिन के जत्थे भी चढ़ दौड़े।।
घूमी सातन की तलवार बेता के पास हुआ मैदान।
पासियों के रहने का गाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

कंस किले की दीवार से चिपके भाँजे व महमूद,
डरा हुआ सहमा सा गाजी पसियन के देख वजूद।
बही तेल की धार, हातिम, कासिम हुए तमाम,
पासियों के रहने का गाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

शर्की ने तुर्की सेना ले पासी गढ़ को ढहा दिया।
कला मण्डप को वीरान किया, स्तम्भों को मिटा दिया।।
मलिहाबाद में बना मकबरा झझरी रौजा देकर नाम।
पासियों के रहने का गाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

मुगल मसऊदी के जुल्मों से काँपे जन भये दूर,
पासी दल ने धर्म न बदला हो गए चकनाचूर।
सैयद औऊर पठानी करके कब्जा खाते आम,
पासियों के रहने का गाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

गढ़ काकोर से बनी काकोरी क्रांति की जोत जला बैठी,
हैवलाक की सेना भागी, औ अग्रेंजों की चाँद घुटी।
पासी दल की हुँकार से फैला देशों में यश नाम।
पासियों के रहने का गाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

पासी गौरव जाग गया है जाने सकल जहान,
फैला हैं पासिन माँ नारी जगाओ अभियान।
ऐतिहासिक व्याख्यान लैके पी० एस० थ्री* का नाम।
पासियों के रहने का गाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

आज मंच पर सबै बखानै पुरखों का अम्बार,
पासी राजन की बतकहिया शान बनी चौपार,
पासियों की जयकार 'रावत' किहिन गोपरा के नाम।
पासियों के रहने का गाँव, सल्हू दिहिन संडीला नाम।।

* पी० एस० थ्री – *पासी सामाजिक सेवा संस्थान*

✍के. के. रावत

व्यक्ति का मूल्यांकन उसके
व्यवसाय के आधार पर नहीं– अपितु उसके काम करने के तरीके और उससे समाज को
होने वाले लाभ के आधार पर करना पड़ेगा। व्यक्ति का यह दायित्व है कि समुदाय से प्राप्त ज्ञान को ईमानदारी
तथा निष्ठा से समुदाय को ही लौटा दे। ऐसा करने वाला सम्मान तथा आदर के योग्य श्रेष्ठतम व्यक्ति है।
– **अडोल्फ हिटलर– "माइन काम्फ"**

एक जाति जिसे अंग्रेज़ विद्रोही मानते थे

✍शीतला प्रसाद,
सं. निदेशक,
राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली

पासी भारत के प्रत्येक भाग में रहते हैं परन्तु पूर्वी उत्तर प्रदेश में यह जाति बहुतायत में है। प्राचीन काल से लेकर मुगलकाल तथा ब्रिटिश शासन के प्रारम्भिक दिनों तक पासी जाति एक शक्तिशाली क़ौम थी। यह एक बुद्धिजीवी जाति थी तथा सेना के लिए शारीरिक सौष्ठव एवं बहादुरी के कारण सबसे योग्य जाति समझी जाती थी। यही कारण था कि विदेशी रियासतों की सेना तथा नवाब की सेना से लेकर ब्रिटिश भारत की सेना विशेष रूप से ब्रिटिश भारत की बॉम्बे की सेना में अधिकांश पासियों को भर्ती किया गया था। सन् १८५७ की आज़ादी की लड़ाई में पासियों में अपने धनुष–बाण की कला तथा भूमिगत बारूदी सुरंगों की लड़ाई में यूरोपीय सैनिक अधिकारियों के छक्के छुड़ा दिए थे। पासियों ने ब्रिटिश सेना क़ो जन–धन में भारी क्षति पहुँचाई। अतः इनकी बहादुरी, युद्धकला एवं देशभक्ति की ब्रिटिश भारत के इतिहास में खुलकर प्रशंसा नहीं की गई बल्कि ब्रिटिश सरकार द्वारा पासियों को प्रथम श्रेणी का शत्रु समझा गया।

ब्रिटिश भारत के शासन की यह परम्परागत नीति रही है कि ब्रिटिश राज्य के अत्याचार एवं तानाशाही के विरूद्ध लड़ने वाले किसी भी समुदाय को अपराधी जाति घोषित कर दिया जाता था। पासी भी इसी प्रकार की श्रेणी के लोगों में थे जिन्होंने कभी आत्मसमर्पण नहीं किया और निरंतर अंग्रेजों के विरूद्ध लड़ते रहे। पासी लोग अपने दमनकर्ताओं का जनविद्रोह द्वारा तख़्ता पलटने में विश्वास करते थे और उन्होंने अपना यह संघर्ष १८५७ से लेकर फरवरी १६२२ तक जब महात्मा गाँधी की अहिंसा की नीति को जनसमूह द्वारा राष्ट्रीय धर्म के रूप में स्वीकार कर लिया गया, तब तक जारी रखा और तत्पश्चात वे भी राष्ट्रीय आन्दोलन की मुख्य धारा से जुड़ गए। पासी अंग्रेजों द्वारा किए जाने वाले नैतिक एवं आर्थिक शोषण के विरूद्ध संघर्ष में अग्रणी थे। यह अत्यंत ही दुर्भाग्यपूर्ण है कि कोई भी इतिहासकार चाहे वह ब्रिटिश हो अथवा भारतीय 'पासी' नाम से अनभिज्ञ है। उन्हें पासी समुदाय के बारे में शायद ही कोई जानकारी है। यदि आधुनिक भारतीय इतिहासकारों के लिए पासी नाम का कोई अर्थ है तो वह यह है कि वह अनुसूचित जाति के रूप में जाने जाते हैं और जिन्हें ब्रिटिश भारत के साम्राज्यवादी शासकों द्वारा अपराधी जाति घोषित किया गया था। पासी समाज को भारत के इतिहास में कभी स्थान नहीं मिला। विद्यमान इतिहास लेखन में पासी जाति के सम्बन्ध में कोई भी उल्लेख नहीं है। यह उपेक्षा हमारे लिए आश्चर्यजनक नहीं है। इतिहास के पृष्ठों पर पासी समाज को अत्यंत उपक्षित स्थान प्राप्त हुआ है। हमारे लिए हमारी साम्राज्यवादी, सामंतवादी तथा संभ्रांतवादी इतिहास लेखन शैली एवं मनोवैज्ञानिक धारणा उत्तरदायी है। ऐसी धारणा एवं इतिहास, लेखन शैली के अंतर्गत केवल संभ्रांत वर्ग, संगठन तथा राजा–महाराजाओं के

इतिहास का सृजन किया गया है। संभ्रांतवाद एवं सामंतवाद सदियों से हमारे देश की ऐतिहासिक लेखन की धारणा एवं शैली को प्रभावित करता रहा है। यही कारण है कि अवध के १८५७ के ब्रिटिश शासन के विरूद्ध सशक्त पासी विद्रोह की आधुनिक इतिहास के पृष्ठों पर चर्चा नहीं हुई। ब्रिटिश शासन के अत्याचार के विरोध में प्रतापगढ़ में भी १८५७ में एक सशक्त पासी विद्रोह उठ खड़ा हुआ था। ठीक इसी समय लखनऊ रेज़ीडेंसी की घेराबंदी के समय अनगिनत पासियों ने अपनी जान की कुर्बानी दी थी। सन् १९२१ से लेकर १९२२ तक हरदोई जनपद में मदारी पासी के नेतृत्व में ब्रिटिश शासन तथा उसके स्थानीय नुमाइंदों अर्थात बड़े जंमीदारों तथा पुलिस के अत्याचारों के विरोध में एक आन्दोलन चल पड़ा था, जिसमें सैकड़ों पासियों ने अपनी जान की कुर्बानी दी थी बाद में यह आंदोलन बाराबंकी, सीतापुर तथा रायबरेली के कुछ हिस्सों में भी फैल गया। आधुनिक भारत का इतिहास पासी जाति के अधिकारों, हितों एवं उनकी शिकायतों की अभिव्यक्ति पर प्रकाश डालने में उदासीन रहा है। यह आश्चर्य की बात है कि सन् १९२१ में फुर्सतगंज बाजार, इलाका नसीराबाद, तहसील सलोन, जिला रायबरेली में अन्याय व शोषण के विरोध में एक सशक्त पासी विद्रोह हुआ था, परन्तु इतिहास में उस पर धूमिल दृष्टि ही पड़ी है। यहाँ मैं विशेषकर भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में पासी जाति की भूमिका के संबंध में आधुनिक भारतीय इतिहास के अध्ययन में एक भारी अंतराल महसूस करता हूँ।

१८५७, १९२१ एवं १९२२ में अवध का पासी विद्रोह अंग्रेजों के विरूद्ध विद्रोही भावना से पूर्ण क्रांति का संकेत था। यदि उनका संघर्ष उन्मादपूर्ण तथा हिंसात्मक था तो वह इसलिए कि यह एक दलित एवं उत्पीड़ित समुदाय का जनांदोलन था जो अपनी शिकायतों को संवैधानिक तरीके से व्यक्त करना नहीं जानते थे। उन्हें सामाजिक संघर्ष की किसी अन्य प्रभावकारी पद्धति की जानकारी नहीं थी, किन्तु उनके संघर्ष में एक ऐसी शक्ति थी कि इस क्षेत्र में ब्रिटिश सरकार की सारी मशीनरी ठप्प पड़ गई थी। इस विषय पर अधिक साहित्य का सृजन नहीं हुआ है। १९वीं एवं २०वीं शताब्दी के ब्रिटिश अथवा भारतीय इतिहासकारों ने अपनी पुस्तकों में इस विषय को छुआ तक नहीं है। अधिकांश ब्रिटिश इतिहासकारों ने अपनी पुस्तकों में इन्हें केवल "हत्यारे", "लुटेरे", "भयंकर डकैत" आदि शब्दों से संबोधित किया है, जो उनकी दृष्टि में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की राह में बाधा उत्पन्न करते थे। इस प्रकार मार्टिन गुर्ब्बिस द्वारा १८५६ में लिखी अपनी ***'एन एकाउन्ट ऑफ म्यूटिनीज़ इन अवध'*** नामक पुस्तक में अवध के पासी विद्रोहियों का उल्लेख करते हुए इन पासी लोगों को देश का भयंकर डाकू बताते हैं। अपनी रिपोर्ट में मार्टिन गुर्ब्बिस आगे लिखते हैं ***"१८५७ के विद्रोह में पासी लोगों के अलावा किसी अन्य ने महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभाई", "इन पासियों को भविष्य में अत्यंत क्रूरता से कुचलने की आवश्यकता है"।*** वे आगे लिखते हैं कि *"पासी उनको नहीं लूटते जो उन पर विश्वास एवं निष्ठा रखते हैं। इनकी वफादारी विश्व प्रसिद्ध है तथा उन पर विश्वास करना एक लोकोक्ति है।"* ब्रिटिश सरकार ने पासियों के अधिकारों को पुनः स्थापना के लिए

कर्मठता एवं उत्सुकतापूर्वक काम नहीं किया। उन्होंने अपनी शक्ति का प्रयोग पासियों के प्रारम्भिक मानवाधिकारों के अलोकतंत्रीय दमन के लिए ही किया। ब्रिटिश शासन पासी जाति की सामरिक शक्तियों से परिचित था। पासियों द्वारा १८५७ के स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़–चढ़कर भाग लिए जानें के कारण उनका सेना तथा पुलिस में प्रवेश निषेध था तथा सम्पूर्ण पासी समुदाय को जरायम पेशेवर कौम घोषित कर दिया गया और उनकी गतिविधियों तथा क्रियाकलापों पर कड़े प्रतिबन्ध लगा दिए गए थे।

जरायम पेशेवार अधिनियम में समय–समय पर संशोधन कर के उक्त अधिनियम के सबसे कठोर प्राविधान विधि (१०) की उपविधि २ केवल पासियों के लिए ही निर्मित किया गया था। इन सभी कारणों से पासी समाज का नैतिक एवं आर्थिक पतन प्रारम्भ हो गया तथा सम्पूर्ण समाज सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से अत्यंत पिछड़ गया। स्वतंत्र भारत में पासी समाज के उत्थान के लिए कई कदम उठाए गए, उनमें से सर्वप्रथम था – जरायम पेशेवर निरस्तीकरण अधिनियम, जिसके द्वारा जरायम पेशेवर अधिनियम को समाप्त कर दिया गया। यही नहीं पासियों को सरकारी नौकरियों में आरक्षण की सुविधाएं प्रदान की गई जिससे यह समुदाय प्रगति के पथ पर चलकर राष्ट्रीय मुख्य धारा में मिल सके। इन सबके बावजूद क्या पासी समाज को भारतीय समाज के जनमन में समानता का स्थान प्राप्त हो चुका है?

पासी सामाजिक सेवा संस्थान क्यों ?

- समाज के अतीत की जानकारी, एकता एवं मानसिक चेतना की जाग्रति के लिए।
- सामाजिक संस्कृति जो समाज की धरोहर है, अनुरक्षण के लिए।
- आपसी वैमनस्यता को दूर कर भावनात्मक प्रगाढ़ता के लिए।
- सामाजिक बिखराव को रोकने एवं सामाजिक उत्थान के लिए।
- भ्रांतियों को मिटाने एवं कुरीतियों को दूर करने के लिए।
- समाज के बुद्धिजीवियों के विवेकपूर्ण विचारों को जानने के लिए।
- समाज के इतिहास व वस्तुस्थिति से परिचित होने के लिए।
- शैक्षिक, सामाजिक, आर्टिक, राजनैतिक शोषण से मुक्ति के लिए।

अतः आज ही सम्पूर्ण भारत में कार्य करने वाले संस्थान की नींव मजबूत करने के लिए अपनी सदस्यता कायम करें।

महमूद गज़नी की लूट

के० के० रावत

महमूद का जन्म ६७१ ई० में हुआ था, ये सन् ६६८ में गज़नी की गद्दी पर बैठा था। इसकी शिक्षा–दीक्षा एक अच्छे स्कूल में शाही देख–रेख में हुई थी। युद्ध शिक्षा बड़े सुचारू रूप से प्राप्त की थी। इसने अपने पिता के साथ राजा जयपाल और अबू–अली–ई–सजुर से युद्ध किया था।

मथुरा के बाद महमूद ने कन्नौज की ओर प्रस्थान किया, रास्ते में जितने भी किले या गढ़ियाँ मिली सबको जीत कर उन्हें जी भर के लूटता हुआ, प्रबल विरोधी हिन्दू राजाओं को मार कर कन्नौज की ओर बढ़ रहा था। **कन्नौज** जो हिन्दू राज्य की सुदृढ़ राजधानी थी। कन्नौज में सात ऊँचे किले थे जिनसे शहर की सुरक्षा की जाती थी, नगर में एक हजार हिन्दू मन्दिर थे। महमूद के समय कन्नौज में परिहार राजा जयपाल राज करता था। गंगा के दूसरे किनारे पर भाग कर, कन्नौज के राजा जयपाल शरणार्थियों की तरह **वारी** नामक स्थान पर रहने लगे। राजा के साथ नगर के असंख्य लोग भी भाग गए क्योंकि मुसलमानों के आतंक व जबरन धर्म परिवर्तन से लोग डर गए थे। कोई बलशाली हिन्दू योद्धा नहीं था जो नागरिकों की सुरक्षा करता। कन्नौज नगर के सातों किले बड़ी आसानी से महमूद के अधीन हो गए थे और उसकी आज्ञानुसार नगर को लूटा जा रहा था। नगर के मूल निवासी तलवारों के साये में अपनी बरबादी देख रहे थे। कन्नौज नगर को लूटने के बाद महमूद, कानपुर से दक्षिण दस मील और इटावा से चौदह मील उत्तरपूर्व स्थित **मुंज** की ओर कूच किया। मुंज का किला ब्राह्मणों का था इसकी अकूत युद्ध सामग्री ने महमूद को २५ दिनों तक अपने पास फटकने नहीं दिया। किले के अन्दर की युद्ध सामग्री जब समाप्त हो गई तो रहने वालों ने अपने परिवार (स्त्री–बच्चों) के समेत अग्नि में स्वाहा कर लिया। किलों को झपटामार आक्रमणों ने तहस–नहस कर दिया था। किले में रहने वालों में एक भी व्यक्ति नहीं बचा था। **महमूद गज़नी ने किले की सभी बेशकीमती वस्तुओं को अपने अधिकार में करके *''अस्सी''* की ओर बढ़ गया। अस्सी को ही असनी के नाम से जाना जाता था, यह फतेहपुर से उत्तर-पूर्व १० मील की दूरी पर स्थित था। अस्सी** का किला भर–पासी राजा चंद्रपाल भर का था। यह किला चौड़ी एवं गहरी खाई से घिरा था और चारों ओर घना जंगल था जिसमें खूँखार जानवरों की बहुतायत थी। पासी राजा चंद्रपाल भर हिन्दुस्तान का बहुत ही पराक्रमी राजा था इसने युद्ध कला में बड़ी ख्याति प्राप्त की थी।

(The fort of Asi was surrounded by a wide and deep moat and arround it lay dense jungle full of venomous reptiles. Its rular CHANDRAPAL BHUR was one of the most powerful chiefs of Hindustan and earned a great reputation. -K.M. Munshi- ***The Struggle for Empire*** Chap-I, Page 15, Published by Bhartiya Vidya Bhawan.) बड़े–बड़े सूरमाओं को युद्ध में हराया, और प्रतिहार पुनः

राजाओं (कन्नौज के राजाओं) को भी बुरी तरह पछाड़ा था। महमूद के आक्रमण में स्थानीय राजाओं, सरदारों की गद्दारी के कारण किले को छोड़ना पड़ा, महमूद गज़नी ने किले को बुरी तरह लूटा और किले के सभी आदमियों को मौत के घाट उतार दिया, यही नहीं किले को गिरवा कर मटियामेट किया, इतना सब कर चुकने के बाद महमूद अपनी फौज के साथ **शर्व** के किले पर आक्रमण करने के लिए प्रस्थान किया।

कनिंघम ने इसको (शर्व को) सरसवाँ जो सहारनपुर के नजदीक यमुना नदी के पूर्व में बताया है। यह किला अति विशाल पत्थरों का बना हुआ था, काफी ऊँचा था और राजा चाँदराय के अधीन था। महमूद के आक्रमण की खबर सुनकर किले का खजाना और अपनी फौज के साथ किले से बाहर एक ऊँची पहाड़ी पर घने जंगलों में छिप गया था। महमूद ने यह सुन कर अपना रास्ता जंगलों के बीच से होकर आगे बढ़ने के लिए तय किया। जंगलों में काफी दूरी तय करने और छानने के उपरांत राजा चाँदराय के रहने के स्थान का पता लगा लिया। राजा चाँदराय को यह डर था कि हार जाने पर धर्म परिवर्तन करना पड़ेगा और ईरान–इराक के सौदागरों के यहाँ गुलाम बना कर बेचा जाएगा, इसलिए अपने खजाने (जिसमें ३ लाख दिरहम की चाँदी, सोना और मोती थे) को छोड़कर और आगे के जंगलों में चला गया। महमूद ने पूरे खजाने और हाथियों को अपने कब्जे में कर लिया तथा बहुत सारे अमीर और गरीब हिन्दुओं को पकड़ कर ईरान और खुरासान के सौदागरों के हाथ गुलाम बनाकर बेच दिया। महमूद पासी राजा चाँदराय पर विजय प्राप्त करके जनवरी १०१६ को गज़नी वापस लौट गया। कन्नौज और असनी व शर्व की विजयों ने महमूद को बहुत बड़ा धनी बना दिया था। इन लूटों में महमूद को २,००,००,००० (दो करोड़) दिरहम, ५३,००० हिन्दू युद्ध कैदी गुलाम, ३५० हाथी मिले थे। **फरश्ता** ने यह बयान किया है कि हिन्दुस्तान की शानदार लूट के बाद गज़नी जाकर विश्व प्रसिद्ध जामा मस्जिद की बुनियाद रखी थी (जिसको पूरा भी करवाया था) यह मस्जिद पूरे संसार में एक दैवी शक्ति केन्द्र के नाम से प्रसिद्ध है।

महमूद की आगे की कहानी बयान करने के पूर्व उसके प्रमुख विरोधियों जिनको उसने शत्रुओं की संज्ञा दी है उनका संक्षिप्त हाल जान लें। महमूद के आक्रमण के समय पूर्वी पंजाब में शाही राजा त्रिलोचन पाल का राज्य था। कल्हण ने लिखा है कि राजा त्रिलोचनपाल ने अपनी विजय को सुनिश्चित करने के लिए अपने हाथी की फौजों में बढ़ोत्तरी की ओर ज्यादा ध्यान देना शुरू किया था। इसके सरहिन्द की ओर देरी से कूच करने का मुख्य कारण यह था कि राजा त्रिलोचन पाल ने ५ वर्ष की अवधि में ही चार बार बाहरी मुसलमानों के आक्रमणों को झेला था या यूँ कहें कि उनका डट कर मुकाबला किया था। इसका सबसे अधिक भयंकर युद्ध शर्व के राजा चाँदराय से हुआ था। जिसमें सबसे ज्यादा नुकसान हुआ था। दोनों राजाओं में मैत्री और शांति स्थिर रहे, इसलिए त्रिलोचनपाल ने अपने लड़के भीमपाल की शादी का प्रस्ताव चाँदराय के समक्ष पहुँचाया। त्रिलोचनपाल

का पुत्र शाही लश्कर को लेकर शादी के लिए पहुँचा तो चाँदराय ने उसे कैद कर लिया, तथा मान–सम्मान की क्षति एवं युद्ध के नुकसान की पूर्ति की माँग पेश कर दी थी। त्रिलोचनपाल ने चाँद राम के यहाँ कोई बड़ी सेना नहीं भेजी थी न आक्रमण करने का अभिप्राय था। न ही कोई हरम के लिए उनकी लड़की की माँग की थी इन दोंनो राजाओं के बीच समय–समय पर युद्ध होता रहता था। यह नोक–झोंक उस समय बन्द हुई जब महमूद गज़नी चढ़ाई करने के लिए आ रहा था और रास्ते में था, उस समय सन् १०१८ में त्रिलोचन पाल ने मालवा के परमार राजा भोज के यहाँ शरण ली थी।

कन्नौज को लूटने के उपरान्त महमूद सन् १०१६ में गज़नी वापस लौट गया। सन् १०२०–२१ में दुबारा हिन्दुस्तान आया था, उसका मकसद चंदेला विद्याधर राजा को दण्ड देना था। क्योंकि इसने प्रतिहार राजा राज्यपाल पर हमला कर के उसको मार डाला था। क्योंकि राज्यपाल ने ही महमूद से संधि कर ली थी। उस समय चंदेला राजा से त्रिलोचनपाल ने भी संधि कर ली थी। इन कारणों से सन् १०२०–२१ में विद्याधर को दण्ड देने के लिए अपनी फौजों को उसी ओर कूच किया था। त्रिलोचनपाल **''ऊत्बी''** नदी के किनारे विरोध पैदा किया था। राहिब, फरिश्ता और निजामुद्दीन अहमद ने **ऊत्बी** नदी को यमुना नदी बताया है तथा बयान किया है कि त्रिलोचनपाल का फौजी कैम्प नदी के किनारे पर लगा था जिसमें भारी पैदल और हाथियों की सेना थी, वह लड़ाई करने के लिए कृतसंकल्प था। महमूद नदी की गहराई तथा तलहटी के कीचड़ के कारण पार करने से घबरा रहा था। महमूद ने ८ आदमियों को हुक्म दिया कि नदी में तैर कर उस पार जाओ, जब यह लोग त्रिलोचनपाल के पास पहुँचे तो उसने ५ हाथी बतौर खर्च के दिए और यह कहा कि महमूद उस पार अपना कैम्प न लगाए। अतः उन मुस्लिम सैनिकों ने बहका कर त्रिलोचनपाल के तीरों को बेकाम कर दिया। महमूद अपनी चाल में कामयाब हो गया था और उसने बकाया सैनिकों से उसी चाल को चलने का हुक्म सुना दिया। सभी सैनिक नदी में कूद गए और सुरक्षित बिना किसी नुकसान के दूसरे क़िनारे पर पहुँच गए। त्रिलोचनपाल ने सभी पर आक्रमण कर दिया पर हार गया। बहुत से हिन्दू इस लड़ाई में काम आए, २७० हाथी महमूद के हाथ लगे। उस समय त्रिलोचनपाल ने विद्याधर का सहारा लेने की कोशिश की लेकिन रास्ते में कुछ हिन्दुओं द्वारा मार डाला गया। भीमपाल (त्रिलोचनपाल का पुत्र) इस समय शर्व के किले से निकल गया था। महमूद ने १०१६ में शर्व किले को लूटा और ५ साल तक बिना ताज के बादशाह रहा। पूरा शाही राज्य मुस्लिम राज्य बन गया था। **ऐसा नहीं था कि शाही राजा ने मुसलमानों का विरोध नहीं किया, पूरे २५ वर्षो से अधिक काल तक बहादुरी के साथ लड़ता रहा। शक्ति के क्षीण होने पर जब सब बरबाद हो गया तो जनमानस पर बेबसी की गहरी छाप बैठ गई थी।** ***अलबरूनी*** **ने लिखा है कि सभी हिन्दू लोग त्रस्त हो गए थे किसी में भी कोई हिम्मत नहीं रह गई थी। इतने त्रस्त हो चुके थे कि अच्छी और सही सोच समाप्त हो चुकी थी, मानसिक रूप से दब गए थे। यही विचार कल्हण ने ''राजतरंगनी'' में**

बयान किया है। त्रिलोचनपाल को हराने के बाद महमूद प्रतिहारों की नई राजधानी बारी की ओर प्रस्थान किया क्योंकि कन्नौज खोने के बाद प्रतिहारों ने अपनी राजंधानी बारी में कर लिया था। महमूद के पहुँचने के पूर्व त्रिलोचनपाल के पुत्र और राज्यपाल वहाँ से चले गए थे। महमूद के पहुँचने पर वहाँ सब कुछ खाली मिला, महमूद ने पूरे शहर को ज़मींपोज़ करने का हुक्म दिया और उसे मटियामेट करवा दिया।

वीर सातन पासी

✍ **बलवंतराय**

सातन हथवा में लिहें तलवार हो, पगड़िया बाँधे अलबेली।
बारह सदी में जन्मे सातन, मातु–पिता के दुलारे,
बालेपन में शस्त्र लै खेलैं, माथे तिलक ललारे।
सातन गावैं वीर गीत पँवार हो, लहरावैं मधुर रसबेली।। सातन०

चौदह बरिस में खूब दौड़ावैं, सरपट घोड़सवारी,
बेंदुला टाप पर थिरकैं ऐसे, जस रणधीर खरारी।
सातन बरिस अठारह पउलैं राजभार हो, रानी नवनवेली।। सातन०

फरमान कनऊजी जयचन्द कइ, अग्रदूत लिहे आवा,
दस लाख कइ सामन्ती कराधान, धमाका सुनावा।
सातन होइगें आग बबूला ख़ार हो, पइहौं इहवा न दस धेली।। सातन०

जाइ कहउ झट अग्रदूत स्वामी जयचन्द से अपने,
सातन सामंत गुलाम नहीं, देखैं उसके मंत सपने।
सातन देइहैं कर नाहीं, कटार हो, पइहौं न झरबेली।। सातन०

सुनि गुनि जवाब सातन कै जयचन्द भये नाखुश
भेजा सैन्य सहित ऊदल संग लाखनपाल निरंकुश।
सातन धाये लेइ अतिकुशल घुड़सवार हो, खेलैं खून–होली।। सातन०

लाखनपाल को हति मार गिराये, ऊदल चले पराय,
सिर पीटै राय कनौजी जयचन्द पूतवा कहाँ बिलाय
सातन मूंछ अइठैं हाथी सवार हो, बँटावैं गुड़भेली।। .सातन०

जौनपुरनामा

करारवीर

(पी० एस०[3] की एक और तथ्यपूर्ण खोज)

✍के० के० रावत

सन् १०१६ ई० में मो० गजनवी के मैनच (आजकल का नाम जफ़राबाद) क्षेत्र के लड़ाकू शासक जातियों भर–पासियों, सोइरी से १५ दिनों तक निरंतर युद्ध करना पड़ा था। कामयाब होते हुए भी दहशतवश अश्विनी और शर्व के भर किलों को लूट कर वापस गजनी चला गया था। इसके बाद फिरोज़ तुगलक कठिन परिश्रम के उपरांत मैनच क्षेत्र में आशंकित आधिपत्य को स्थिर रखने के लिए अपने भाई मुहम्मद बिन तुगलक जिसका असली नाम जूना खाँ था उसके नाम से जूनागढ़ की नींव पड़ी, जो जौनपुर नगर में बदल गया। जौनपुर सरकार की स्थापना करके दिल्ली सरकार की संरक्षणता भी प्रदान की थी। इसका प्रथम शासक ख्वाज़ा जहान हुआ था। तैमूर के आक्रमण से दिल्ली सरकार के क्षीण होते ही सन् १३३६ ई० में इसकी मृत्यु के बाद इसका भाई इब्राहीम शासक बना था। १५२७ ई० में मुगलों के अथक परिश्रम के बाद शिर्की राज्य को समाप्त कर मुगल सल्तनत की नींव डाल पाए थे।

पासी मंदिर करार वीर : सन् १३६१ ई० में फिरोज़ तुगलक जौनपुर बसाने आया था तो गोमती नदी के तट पर ऊँचे टीले पर एक विराट किले रूप में भव्य मंदिर देखा था, जो पासी वीर, करार मंदिर के नाम से पुकारा जाता था। करार वीर प्राचीन भर–पासी जाति के परिवार से थे। यह अयोध्या के सूर्यवंशीय राजाओं के समकालीन थे, इनका मैनच क्षेत्र पर आधिपत्य था। सूर्यवंशीय राजाओं ने यात्रियों को कष्ट पहुँचाने का आरोप लगा कर, दैत्य कह करके पासी सरदार करार वीर की हत्या कर दी थी, इसके शरीर के टुकड़े–टुकड़े करके यत्र–तत्र फेंक दिया। वीर पासियों ने उन टुकड़ों को एकत्रित करके एक ऊँचे स्थान पर अपने लोकप्रिय राजा का अपनी रीति के अनुसार दाह संस्कार किया था। दाह–संस्कार के बाद उसी स्थल पर सभी पासी अनुयाइयों, शिष्यों ने अपने श्रद्धा सुमन चढ़ाकर पूजा–अर्चना शुरू कर दी और आस–पास से उपहार– भेंट प्राप्त करके उस स्थल पर एक मंदिर का निर्माण भी कर लिया था। एक बड़ी शिला की मूर्ति करार वीर के अनुरूप बनवा कर प्रतिष्ठित कर दी जिससे अपने पासी सरदार करार वीर की स्मृति ताजा करते थे। फिरोज ने इस स्थान को देखकर इस मंदिर को तोड़कर अपना किला बनाने का आदेश दिया और इसके इर्द–गिर्द नगर बसाया। करार की ठोस प्रतिमा को तुगलक अलग नहीं कर पाया था, उसी के ऊपर

अनुयाइयों ने एक मंदिर का निर्माण कर लिया था, जो साधारण था। आज इस पासी करार वीर मंदिर को करहिया मंदिर के नाम से पुकारते हैं। प्राचीनतम होने से इसकी आस्था आज सभी वर्गो में है।

करारवीर की ऐतिहासिकता : सैयद इकबाल अहमद जौनपुरी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक **''शर्कीराज जौनपुर का इतिहास''** ४६१ से ४६४ तक में मंदिर करारवीर का वर्णन प्रमाणिकता से दिया और लेखों के तर्कपूर्ण विचारों के साथ ही शर्की मानूमेन्टों (Monuments) का हवाला भी दिया है। उन्हीं की पुस्तक से :– **''मंदिर करारवीर- यह मंदिर गोमती नदी के उत्तरी तट पर फिरोजशाही किले में आसन्न पश्चिम और दक्षिण कोने पर स्थित है। यह जौनपुर का प्राचीनतम मंदिर है जो जौनपुर आबाद होने से बहुत पूर्व निर्मित हुआ था इस समय मंदिर का प्रचीन भवन विद्यमान नहीं है,मगर पत्थर की ठोस मूर्ति जिसका बड़ा भारी आयतन है तथा गेरू रंग से रंगा हुआ है अब भी विद्यमान है। जिस भवन के भीतर यह मूर्ति लगी हुई है वह वर्तमान काल में निर्मित हुआ है जिसके संबंध में विभिन्न कथाएँ कही जा रही हैं।''**

जुगराफिया जौनपुर तथा दूसरे लेखों में लिखा है कि – **''अयोध्या के राजा राम चन्द्रजी के काल में करारवीर जिला जौनपुर में निवास करता था वह प्रायः यात्रियों को कष्ट पहुँचाता था। राजा राम चन्द्रजी ने जब इस समाचार को सुना तो स्वयं यहाँ आकर उसकी हत्या कर डाली और उसके शरीर के सभी टुकड़ों को यत्र-तत्र फेंक दिया। उसके शिष्यों ने पूजा पाट आदि के अभिप्राय से इसे एकत्रित करके इस स्थान पर मंदिर बना दिया। निकटवर्ती स्थानों के राजा इस पर उपहार भेंट करते थे तथा मरम्मत कराते थे। सन् १३६१ में जब फिरोजशाह तुगलक जौनपुर आबाद करने के अभिप्राय से आया तो उसने इसे तोड़कर किला पिर्माण करने का आदेश दिया।''** (जुगराफिया जौनपुर भाग–१, पृष्ठ ३७, शर्की मानूमेंट, तारीखे जौनपुर पृष्ठ ७)

शर्की मानूमेंट में फसीउद्दीन यह लिखते हैं – **''करार वीर प्राचीन भर परिवार के सरदार थे।''** (जौनपुर नामा– मौलवी खैरूद्दीन फारसी)

''राजा राम चन्द्रजी के काल में जौनपुर का शासक करार वीर था जो एक दैत्य था। श्री राम चन्द्रजी ने युद्ध में उसका वध किया। सन् ११६८ ई० में विजय चन्द्र ने करार वीर का मंदिर बनवाया जिसको फिरोज शाह ने धाराशाही उसके पत्थरों से किले की नींव डाली थी।''(गजेटियर जौनपुर, अध्याय ५, पृष्ठ १४६)

''सर्वप्रथम जौनपुर पर सोयरी और भर जातियों का शासन था'' (गजेटियर जौनपुर, मुल्ला महमूद अली मेंहदी खाँ)

''मेरे विचार से इस नाम का कोई देवता आर्यो, चौहानों या परिहारों के यहाँ नहीं मिलता, यदि विजय चन्द्र कोई मंदिर निर्माण कराता भी तो वह श्री कृष्ण जी, हनुमान जी या राम चन्द्र जी का होता'' (शर्की मानूमेंट में फसीउद्दीन बदाऊँनी के विचार)

पासी क्रांतिवीर स्व० शिवपति : प्राचीन इतिहास की कड़ी में, क्रांतिकारी स्व० शिवपति ने स्वतंत्रता संग्राम में कूद कर जौनपुर के पासियों का नाम अत्यंत ऊँचा कर दिया है। सन् १६४२ के भारत छोड़ो आंदोलन में एक सक्रिय भूमिका निभाते हुए जौनपुर के छात्रों, युवकों, पासियों का नेतृत्व किया जिससे अंग्रेजी शासकों की आँख की किरकिरी बने। शिवपति जी को १८ वर्ष की अल्प आयु में गिरफ्तार कर दो वर्ष का कठोर कारावास दिया था। यही नहीं अंग्रेजो ने १८ वर्षीय बालक शिवपति को कारागार में तन्हाई में रखा था और नग्न शरीर पर प्रति माह १५ बेंत की मार करके अपनी क्रूरता की हद पार कर दी थी। **धन्य हैं पासी क्रांतिवीर शिवपति जिन्होंने अंग्रेजों की क्रूरता के समक्ष पासी समाज का सिर नीचा नहीं होने दिया। पासी समाज अपने इस सपूत का अभिनंदन करता है। ५ अगस्त सन् १६६६ में क्रांतिकारी शिवपति पुत्र स्व० मा० रामऔतार ग्राम- कुसम्भी, पो० - मोकलपुर, जिला- जौनपुर का देहावसान हुआ। इनका कार्यक्षेत्र जौनपुर, आज़मगढ़, वाराणसी था।** श्री बलवंतराय जी उस समय इनके सहपाठियों में थे जिन्होंने यह बताया है।

आज पी०एस०³ जौनपुर के पासियों के समक्ष इतिहास की एक सच्ची झलक प्रस्तुत करते हुए यह अपील करता है कि अपनी अस्मिता को स्थिर रखने के लिए होने वाली पासी सम्मेलनों में भाग लेकर पासी सामाजिक सेवा संस्थान को सहयोग करें।

निवेदन

लेखकों/कवियों/साहित्यकारों से अनुरोध है कि ***'अस्मिता'*** भाग–२ के लिए *पासी समाज पर* प्रमाणिक/ऐतिहासिक/मौलिक निबन्धों को भेजने का कष्ट करें।

के. के. रावत
अध्यक्ष, पी.एस.³
91/92 संजयपुरम, इन्दिरानगर, लखनऊ

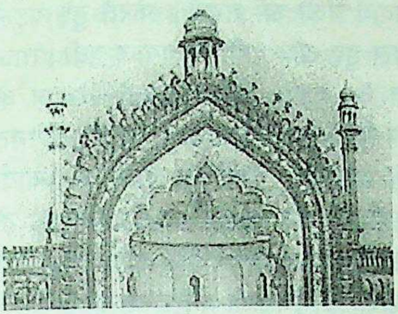

ऐतिहासिक सत्यकथा

महकपरी

✍ के० के० रावत

अम्मन और अमामन दो कुटिल, चतुर, चालाक, धूर्त, कुटनियाँ अपने फन में माहिर नवाबी बादशाहत में मशहूर देखते–देखते आँख का काजल निकालती थी। तंग गलियों के चक्कर काट–काट कर थक गई थी। एक नुक्कड़ पर बैठ कर उस दिन को कोस रही थी जब फैजाबाद के नवाब ने अपनी राजधानी लखनऊ में बनाई थी। फैजाबाद में अब वह रौनक नहीं रह गई थी। दोनों ने यहाँ से कइयों को नवाब के हरम में पहुँचा कर ईनाम ले चुकी थी। अब परीखाने के लिए एक नायाब हीरे की तलाश में जुटी थीं।

१३ फरवरी सन् १८४७ लखनऊ शहर में कोहराम मच गया। राजमहल के सामने गमज़दा भीड़ इकट्ठा हो रही थी। क्योंकि बादशाह हज़रत अमज़द अली इंतकाल फरमा गए थे। बादशाह की अय्याशियों का इंतजाम करने वाली आवारा औरतों का झुण्ड दहाड़ें मार–मार कर विलाप कर रहा था। लोगों की जबान पर बादशाह सलामत की अय्याशियों की चर्चा बन्द थी। केवल पक्के नमाजी व नेक रोज़ेदार की चर्चा हो रही थी। थोड़ा दूर हट कर एक झुण्ड में यह काना–फूसी हो रही थी कि अब गद्दी किसको मिलेगी? बड़े लड़के मुस्तफा अली या दूसरे लड़के वाजिद अली को? बड़ा लड़का बड़ा ही बदमिजाज है वहीं वाजिद अली का स्वाभाव कोमल है, साहित्य प्रेमी है, लोकप्रिय भी है। तभी एक व्यक्ति ने झल्ला कर कहा कि यह बेकार की बहस है बादशाह सलामत ने अपने जीवन काल में पक्का कर दिया है कि वाजिद अली को "वली अहद" बना दिया है। बेगम साहिबा जब आई थीं तो मुस्तफा अली डेढ़ साल का था। इसलिए उसे वली अहदी से बादशाह ने महरूम कर दिया था। उसी समय राजमहल के बाहर कुछ ज़्यादा शोरगुल हुआ सब का ध्यान उधर गया। एक गोरे रंग का व्यक्ति देशी और अंग्रेजी लिबास में सिर झुकाए दरवाजे की ओर बढ़ रहा था। सभी घेरे हुए कह रहे थे कि :– हजूर हमारे वली अहद वाजिद अली को ही जायज वारिस मान लीजिए। गद्दी पर वली अहद को ही बैठाईयेगा। यह साहब "सवातीने अवध" के लेखक कमालुद्दीन हैदर उर्फ मीर ज़ायर थे। जो राजमहल में दाखिल हो चुके थे। कोतवाल गुलाम रज़ा को देखते ही जनता सिमट गई। शाही तख़्त को घेरे लोग खड़े थे, एक ओर ऐतमाद्दुदौला हैदर खाँ, शर्फुद्दौला व कोतवाल गुलाम रज़ा खाँ, दूसरी ओर मिर्ज़ा वसी अली ख़ाँ, हाफिजुद्दौला और मौलवी मीर बाकर अली, शफीर शाही (बादशाह की खबरें ले जाने वाले) खड़े थे। कमरे में रेसीडेन्ट अपने सहायक के साथ खड़े थे। वली अहद वाजिद अली को पैगाम भेजा गया था। चोबदार ने आवाज़ लगाई– सावधान! शहंशाह, परवरे आलम, हजूरे नियामत, ख़ुदाबन्द...... की सवारी आ गई है। अफरा–तफरी की दौड़ शुरू हो गई, इसी में तख़्त पर चढ़ने का जीना टूट गया, खुशियों की दौड़ में एक

बदशगुनी। खैर! अमीरूद्दौला और मेंहदी खाँ और नवाब नक़ी खाँ तसवीह फेरते हुए पहले कमरे में दाखिल हुए। नवाब वाजिद अली शाह कमरे में दाखिल हुए और वहीं पर नमाज पढ़ी। ताज लाया गया। रेज़ीडेन्ट ने नवाब वाज़िद अली की बादशाहत का एलान किया। रस्मो–रिवाज़ के मुताबिक नवाब वाज़िद अली शाह ने ताज पहना और तख़्त पर बैठे। सुबह के ६ बज कर तीस मिनट का समय था। २६ साल के वली अहद का चेहरा बादशाही तख़्त पर बैठते ही पहले से ज़्यादा आब़दार हो कर चमकने लगा था। सभी मंत्र–मुग्ध हो कर देख रहे थे। पलटनों के हर सिपाही के साथ सभी अहलकारों को ईनाम तक़सीम किए गए। तख़्त से थोड़ा हट कर रेज़ीडेन्ट रिचमोड बैठे थे। नज़रें पेश हो रही थीं। महफिलें सज रही थीं, जश्ने ताजपोशी में घुँघरूओं की छमछमाहट तबले की थाप पर बजने लगी थी।

अम्मन और अमामन के कानों में बरतनों के फ़ेकने की एक मद्धिम आवाज़ टकराई, कानों को उटेरा और सहमते हुए आवाज़ की दिशा का अनुमान लगा कर चल पड़ी। सुनसान गलियों को रौंदते हुए गंदगी के साम्राज्य से पार होकर एक टूटे–फूटे ख़स्ताहाल मकान के सामने खड़ी हो गई। मकान का टूटा–फूटा दरवाजा टाट के पैबंदों का पर्दा भीतर की कहानी कह रहा था। दरवाजे पर बरतनों की खड़खड़ाहट में सुबकती आवाज़ साफ–साफ सुनाई दे रही थी। आँगन के कर्कश स्वर में अजीबो–गरीब क़लमा पढ़ा जा रहा था। *"यह बर्तन क्यों फोड़ रही है, पता नहीं यह हरामजादी कब बड़ी होगी और कमाएगी। यहाँ तो खाने के लाले पड़े हैं। नाच–गाना सीखने में अपने नाज़ नखरे दिखाती है पर काम करने में जान निकलती है। अभी से महारानी बन कर रह रही है यह बित्ते भर की छोकरी हमारी नाक में दम भरे है। मैंने कई बार मना किया है कि इसका कहीं इंतजाम कर दो पर मेरी कोई सुनता ही नहीं है।'* अधेड़ उम्र की औरत अपनी बकबक लगाए थी और कोने में एक लड़की सिसकियाँ भर–भर कर बर्तन साफ कर रही थी। लड़की कमसिन थी पर उसका नूर चमक रहा था। बिखरे बाल, उन्नत वक्ष कुर्ते के बाहर निकलने को बेताब थे। बड़ी–बड़ी सुरमई आँखें संताप के बावजूद कटारी का काम कर रही थीं। सुराहीदार गर्दन झुकी हुई साकी बनी थीं, माथे पर लटें लहरा रहीं थीं, गुदाज़ बदन बरबस आगोश में मसलने के लिए बेताब था। इस छलकते रूप को देखकर कामदेव भी डगमगा रहा था। गोरे गालों पर आँसू मोती बन कर चमक रहे थे। दोनों कुटनियाँ आँगन में आ गई, खुदाई नूर ने अपने फटे दुपट्टे से सिर ढाप लिया पर इनकी तीखी नज़रों से शबाब छिप न सका। अधेड़ उम्र की औरत ने अपनी जबान को लगाम दे कर बड़ी तल्ख़ आवाज़ में पानदान को अलग करते हुए पूछा– ये तुम लोग कौन हो? जो बिना दस्तक दिए चली आ रही हो। 'बताती हूँ' कह कर उसके सामने बैठ गई और नायाब हीरे को कनखियों से देखने लगी।

रेज़ीडेन्ट अपने दफ्तर में अपने अधिकारियों के साथ विचार–विमर्श कर रहा था। उनके साथ बैठी बीबियाँ ऊब रही थीं, कीमती विलायती शराब भी माहौल में बदलाव नहीं ला पा

रही थी। क्योंकि बादशाह बनने के बाद वाज़िद अली शाह जनता के बीच लोकप्रिय हो रहे थे। बादशाह में गरूर नाममात्र को नहीं था। किसी प्रकार का अवगुण हावी नहीं हो रहा था। शासन प्रबंध ा अच्छी प्रकार चलने लगा था। हिन्दू–मुस्लिम एकता और मजबूत हो रही थी। चारों ओर भाई–चारा दिखने लगा था, यही अंग्रेजों के लिए चिन्ता का विषय बना हुआ था। तभी दरबान ने एक मुसाहिब के आने की खबर दी। मुसाहिब ने आकर रेज़ीडेन्ट को अपना सलाम पेश किया। रेज़ीडेन्ट ने पूछा तुम क्या खबर लाया है? मुसाहिब ने सिर झुकाकर कहना शुरू किया – साहब बहादुर, बादशाह हजूर सुबह अजान के पहले उठ जाते हैं और नमाज़ पढ़ते हैं। उसके बाद अपनी माँ– राजमाता से मिलने जाते हैं, सलाह–मशविरा करते हैं, फिर परेड के मैदान में जाकर दो घंटे कवायद कराते हैं। ठीक नौ बजे दरबार में पहुँच जाते हैं, जहाँ सबसे पहले मलगशय शेरवानी (शिकायती अर्ज़ियों का चाँदी का बक्सा) खोला जाता है उसकी अर्जियाँ पढ़ी जाती हैं उन पर तुरंत कार्यवाही के आदेश दिए जाते हैं। बादशाह सलामत स्वयं २६ महकमों का काम देखतें हैं। हर इतवार सुबह ६ बजे अपने पिता की मजार काठी फराह बक्श में जाते हैं। आम जनता की शिकायतें जानने के लिए बादशाह ने नियम बनाया है कि नित्य सायंकाल जब उनकी सवारी निकले तो २ सुर्ख तुर्क सिपाही अपने सिर पर चाँदी के बक्से लेकर चलें और हर ख़ासोआम को इजाजत थी कि अपनी अर्ज़ियाँ बक्से में डालते जाएँ। इतना बतलाकर मुसाहिब चला गया। कर्नल सलीमन भेष बदल कर रेज़ीडेंसी से शहर की ओर चल पड़ा और मशहूर तवायफ़ मुन्नीजान के कमरे में दाखिल हुआ। मुन्नीजान कर्नल के आने का इंतजार कर रही थी। जाम बने, दोंनो ने चुस्कियाँ ली, सरूर के चढ़ते ही एक दूसरे के आगोश में झूमने लगे।

दरोगा (ख्वाजा शरह) हाथ में कोड़ा लिये मरदाने वेश में हर कमरे में जा–जाकर मुआयना कर रहा था। सभी बेगमों के प्रत्येक अंगों का सूक्ष्म निरीक्षण कर रहा था। बेगमें रोजमर्रा की तरह अपना–अपना मुआयना करा रही थीं और अपनी जरूरतों की फेहरिस्त भी बनवा रही थीं। जनानखाने, महलों, ख्वाबगाहों और परीखानों के अन्दर की व्यवस्था देखने के लिए कुशाग्र बुद्धि वाले तेज–तर्रार सख्त तबीयत के वफादार हिजड़े नियुक्त किए जाते थे। जिनको बड़े अख़्तियार मिले हुए थे। ये शासन व्यवस्था चलाने में अपना दख़ल बादशाह से रखते थे। इनकी नियुक्ति से पर्दा–प्रथा बदस्तूर रहती और पुरूषों से होने वाले खतरे या बेगमों/औरतों के बहकने का डर नहीं रहता था। महलों और परीखानों की निगरानी के लिए ख्वाजा शरह फिरोजुद्दौला को दरोगा नियुक्त किया गया था। और व्यवस्था देख कर ख्वाजा शरह बाहर निकला तो उसके सामने से आती हुई अम्मन और अमामन दिख गई। ऊँची आवाज़ में हाथ चमकाकर बोला– ए क़हाँ से आ रही हो? किसकी कमर तुड़वाओगी। वहीं रूको। खोल के पल्ले, बैठ जाओ कोठरी में। कह कर ख्वाजा शरह अपने काम में मशगूल हो गया। सुरक्षा व्यवस्था देखने के बाद कोठरी में जा कर बैठ गया, दोंनो कुटनियों ने झुक कर सलाम किया। लाई गई नज़रें नजर कीं और नीचे जमीन पर बैठ कर दरोगा के पाँव दबाने लगीं। अरे बदमाशों– इतने दिन कहाँ रहीं? क्या कोई मिल गया था?

नहीं हजूर अबकी बार बहुत दौड़ धूप और मेहनत करनी पड़ी है, बड़ी खस्ता हालत हो गई है। दोंनो ने खुशामदी स्वरों में कहा– ख्वाजा शरह ने अपने हाथों से दोंनो का एक–एक वक्ष दबाया। सी–सी की आवाज़ हुई। ये लो जैसे मैं जानता नहीं कि तुम दोनों कितनी हरामजादियाँ हो। खैर कहाँ क्या बात है। ख्वाजा शरह ने अपनी भाषा में कहा। "बात ये है हजूर कि एक मासूम कच्ची कली फैजाबाद की गलियों में से ले कर फूल बनाने के लिए खुदाबंद शाह आलम को नज़र करने आई हूँ। अम्मन ने आँख मटकाते हुए कहा" क्या उड़ा कर ले आई हो? नहीं हजूर उसके माँ–बाप की राजी–खुशी से शाही खिदमत के लिए इसके माँ–बाप ने इजाजत दी तालीम वगैरह जानती है या शोख अदाओं के लटके–झटके नहीं जानतीं इसको पूरी तालीम नाचना–गाना सिखाया है। क्या मजाल है कि कोई इससे जाए। नाचती है तो घुघरूओं है तो फूल झड़ते हैं, सुराहीदार भरा चेहरा, गुदाज बदन की नागिन की तरह लहराती चोटी. क्या औरतें भी होश खो दें।

वाजिद अली शाह

बाइज़्जत नौकरी कराने लाई हूँ। है। अमामन ने जवाब दिया। कुछ खालीमूली........ अम्मान ने अपनी के साथ कहा "अरे हजूर क्या हम दी है। हर प्रकार के साज़ पर एक–एक अदा में माहिर बनाया है नज़र हटा ले। खाना–पीना भूल के साथ दिल खिंच जाता है, हँसती गर्दन, कटीले नैन, मासूम सादगी कशिश, और उसके उभारों से .... क्या कहें हजूर........ आदमी ठीक है! ठीक है! क्या हजूर आलम की हो पाएगी? अरे इतना रंग चढ़ाया है कि आलम के ख्वाबों में डूबा रहता है इसका मन। वह तो साहिबेआलम के दीदार करने के लिये बेकरार बैठी है। अम्मन ने अपने फितरती अंदाज में कहा– और हजूर मम्मन खाँ की निगरानी में सुखपाल में बैठी है। सुनकर फिरोजुद्दौला बादशाह के खास ख्वाज़ाशरह गुलबददुनुरद्दौला से सलाह–मशविरा करने चला गया। थोड़ी देर बाद लौटने पर कहा कि मुमुतआ की रस्म पूरी करा। हजूर साहब सब रस्में पूरी हैं तभी सुखपाल में है। मासूम कच्ची कली को महक परी का नाम देकर नूर मंज़िलवालियों में रखा गया। खिदमत के लिए चार ख्वासें दे दी गई थीं। दोनों कुटनियाँ ईनाम–इकराम लेकर महक परी को परी खाने में दाखिल करवाकर दूसरे शिकार की टोह के लिए निकल पड़ी थीं।

शाम से बेगमों ने अपना सिंगार करना शुरू कर दिया। शाम होते ही कैसरबाग़ जगमगाने लगा था। पूरा बाग खुशबुओं से सराबोर था। परीखाने की परियाँ रंग–बिरंगी तितलियाकी तरह बहक रही थीं। बग़ीचे की संगमरमरी चौकी पर मख़मली कालीन सलमें–सितारों से झिलमिला रही थी। बादशाह सलामत के आने की प्रतीक्षा बेगमें बड़ी बेसब्री से कर रही थीं। इनके गहनों में जड़े हीरे जवाराहतों की झिलमिलाहट आँखों में चकाचौंध पैदा कर रही थी। एक से एक खूबसूरत

चेहरे दमक रहे थे। बेगमों की खिलखिलाहट व चुहलबाजियों से दिल बल्लियों उछल रहा था। अभी पिया जानेआलम नहीं आए हैं, समय आगे बढ़ रहा था। दिल की धड़कने तेज हो रही थीं। सभी सोच रहीं थी कि आज न जाने आलम के साथ कौन भाग्यशालिनी बुर्ज पर बने शयनकक्ष में जाने आलम की अंकशायिनी बनेगी। और कितने दिनों तक अपने रूप का रस पिलायेगी। और क्या ओहदा हासिल करेगी। सभी आलम की निशानी की तलबगार थी। आज महक परी को भी बेगमों में शामिल होने का अवसर मिला था, वह गजब की सुंदर लग रही थी। .... हलचल बढ़ गई पिया जाने आलम आ रहे थे, सभी मुस्तैद हो गई। बेगमों ने जानेआलम को घेरे में कर अठखेलियाँ करने लगीं। बेबाक हुस्न और दहकते यौवन के सैलाब में पिया जाने आलम तैरने लगे। आलम ने अपनी नजरे उठाई तो महक परी के ऊपर जाकर टिक गई और आँखें टकराई महक परी पर नशा छा गया। लहरा कर जाने आलम के सीने से चिपक गई। खेल खत्म हुआ। आज की अंकशायिनी महक परी चुन ली गई। महकपरी को बादशाह ने हज़रतमहल का ख़िताब दिया। यही बेगम हज़रत महल के नाम से प्रसिद्ध हुई।

तथ्यों के झरोखे से

पासी राजा गंगाबक्स रावत के प्रमाणिक इतिहास/जीवनवृत पर संबंधित उस समय की लिखी गई पुस्तकों का अवलोकन करने से ही सारी भ्राँतियां स्वयं ही आयने की तरह साफ हो जाती है। पासी नायकों में गंगाबक्स रावत का जितना विश्वसनीय लिखित इतिहास मिलता है उतना किसी अन्य का नही। गलत अफवाहें फैलाने वाले समाज को अंधकार की ओर ढकेल रहे है। इसी संदर्भ में कुछ उद्धरण निम्नवत् है-

सवानेहाते सलातीन अवध अथवा कैसरूत्तवारीख (दो भाग) लेखक सैयद कमालुद्दीन हैदर उर्फ़ सैयद मीरआयर ने लिखा है कि "जमींदार तालुका महाई गंगाबक्स लगान नहीं देता है"

परिपूर्णानन्द वर्म्मा– वांजिद अली शाह का राज और उसका अन्त, पृ० १८३

"खुम्मा रावत पासी जाति के थे। गंगाबक्स रावत इनका परपोता था, इनका दो सौ गाँवों/पुरवों पर आधिपत्य था"।

सर विलियम हेनरी सलीमन– जर्नी थ्रू दि किंगडम ऑफ अवध सन् १८४६–५०, वाल्यू० २, पृ० २३२–३४

"गंगाबक्स पासी जाति का था इसने देवा से दो मील कासिमगंज में अपना किला बनाया था"।

जी० डी० भटनागर, लेक्च० (इति०) बी०एच०यू०– अवध अण्डर वाजिद अली शाह (शोधपत्र), पृ०५६–५७

ले0 इलडस्टोन की मौत के घाट उतारने वाले वीर राजा गंगाबक्स रावत को अंगेज पकड़ नही पाये तो उनको डकैत की संज्ञा देकर हर प्रकार से बदनाम करना शुरू किया था।

सैमुयल लुकास– एक्सप्लोइटिंग इन अवध, १८५७ में लंदन से प्रकाशित, पृ० ६६

-के० के० रावत

हमारे पासी सामाजिक संस्थान/संस्थायें एवं समितियाँ

सन् १६१५ से १६६८

✍के० के० रावत

समाज के उत्थान एवं विकास के लिए समाज के जागरूक व्यक्तियों द्वारा किए जाने वाली कार्य प्रणाली का लेखा जोखा रखनें का कार्य सामाजिक संस्था करती है। इन संस्थाओं/समितियों का अस्तित्व इनके पदाधिकारियों के भावनात्मक लगाव के ऊपर निर्भर करता है। समयानुकूल संस्थायें बनती/बिगड़ती भी रहती हैं।

१. सन् १६१५
सुधार सभा एवं पासी महासभा
नया पुरा इलाहाबाद

इलाहाबाद में बीसवीं सदी के प्रारम्भिक काल में सामाजिक मान्यताओं के अन्तर्गत पासियों के सामाजिक स्तर का दर्जा नीचा समझा जाता था। पासी समाज में फैली कुरीतियों के कारण (भले ही वह लादी गयीं हों) अन्य समाजों से अलग थलग था। उस समय इलाहाबाद के पासियों ने भक्ति मार्ग को अपनाकर अपनी सामाजिक कुरीतियों को दूर करने का माध्यम बनाया। इसके लिये इलाहाबाद में पासियों की एक **भजनीक मंडली** बनी जिसका नाम ***सुधार सभा*** रखा गया।

अंग्रेजी शासन काल था, पासियों पर जरायम पेशा एक्ट लागू था। स्थिति बड़ी ही दयनीय थी। पासी बिरादरी की अपनी पंचायतें कायम थी। विवाहों/भोजों आदि समारोहों में सुधार सभा की **भजनीक मंडली** जा जाकर अपने भजनों द्वारा मानसिक चेतना को जगाती थी। इसी भक्त मंडली के भगत विशेषर दास नयापुरा इलाहाबाद ने १३ नवम्बर सन् १६१५ को अपनें घर पर पासियों को एकत्रित करके सभा की। इसी सभा में सर्वसम्मति से ***पासी महासभा नया पुरा इलाहाबाद*** की स्थापना की गयी जिसके अध्यक्ष भक्त विशेषर दास ही चुने गये थे।

२. सन् १६२०
पासी भक्त सनातन धर्म सभा, प्रयाग, इलाहाबाद

गंगा,यमुना,सरस्वती की संगम स्थली पर स्थित प्रयाग धार्मिक रूप में अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त किये हुये है। सन् १६२० के आस–पास यहां पर ब्राह्मण वादी परम्पराओं का पालन बड़ी कड़ाई से किया जाता था। जाति वाद का बोलबाला था। उस समय में आर्य समाजी "आक्सीजन" फैल रही थी, जिससे निम्न वर्ग के लोगों को राहत मिली इस आर्य समाजी हवा के कारण अपने सामाजिक स्तर से सामान्य जनों के स्तर में झाँकने की

हिम्मत पड़ी थी। **सुधार सभा** और **पासी महासभा** के कारण लोगों में चेतना की लहर दौड़ी थी वह लहर **आर्य समाजी व्यवस्था** के पास जा कर केन्द्रित हो गई थी। सभी पासियों ने एक बृहत् पासी सभा का आयोजन किया यह सभा नवम्बर १६३२ में की गई थी। आर्य समाज से प्रेरित हो कर १३ नवम्बर सन् १६३२ को **सुधार सभा** का नाम बदल कर **पासी भक्त सनातन धर्म सभा, प्रयाग इलाहाबाद** नामक संस्था का पंजीकरण कराया गया था। इस संस्था का प्रचार प्रसार खूब किया गया। इस संस्था ने पासियों की बड़ी–बड़ी सभाएँ करके वार्षिक अधिवेशन भी किए। इनके साथ आर्य समाजियों काभरपूर सहयोग मिलता था। इसके प्रथम अधिवेशन (१६३२) के बाद दूसरा वार्षिक अधिवेशन १३ नवम्बर सन् १६३३ को घूरे लाल भगत बाग, गल्ला बाजार, प्रयाग, इलाहाबाद के घर पर हुआ। जिसमें अन्य जिलों के पासियों ने भी भाग लिया था। इस समारोह के सभापति सूरजदीन भगत थे और मुख्य अतिथि मदन मोहन मालवीय जी महाराज थे। जौनपुर, बनारस, फैजाबाद, लखनऊ तथा बाराबंकी आदि के पासियों के साथ बाबू बजरंग बिहारी लाल जमींदार व कन्ट्रैक्टर न्योछना बाराबंकी ने अपने पासी साथियों के साथ भाग लिया था। इसके मुख्य मसुरियादीन भू.पू. भारतीय डोमिनियन (संसद सदस्य) एवं मुंशी जवाहिर लाल, स्व. गोकुल प्रसाद भू.पू. विधायक एवं चेतराम जो सन् १६३०–३१ में सर्वप्रथम म्युनिसिपल बोर्ड के नामजद कमिश्नर थे। यह विशाल पासी सभा किसान जमींदार एशोसिएशन बिल्डिंग में आयोजित की गयी थी। इसने १६८३ तक ५० वार्षिक सम्मेलन और १६८४ में विशाल जन सम्मेलन, २८ फरवरी १६८४ को, स्वर्ण जयंती समारोह, ८ अप्रैल १६८४ में किये।

३. सन् १६३३ ऑल इंडिया पासी पंचायत सभा

इलाहाबाद के "सनातन धर्म पासी महासभा" के १६३३ के अधिवेशन में वैदिक अनुष्ठानों की झलक कुछ पासी चौधरियों को रास नहीं आई थी। अतः जिलेवार घर–घर जाकर पासियों को जाग्रत करके संगठित किया था। यह वह समय था जब अंग्रेजी शासकों द्वारा पासियों की पंचायतों को मान्यता मिल चुकी थी। सरकार पासियों की पंचायतों पर विशेष ध्यान दे रही थी। इस समय ब्राह्मणवादी परम्परा में सम्मान हासिल करने एवं उनके उत्पीड़न से निजात पाने के लिए "आर्य समाजी पद्धति" से दूर रह कर उस समय के पासी समाज सुधारकों ने इलाहाबाद के पासी चौधरियों से मिलकर **"ऑल इंडिया पासी महा सभा"** का गठन किया गया था। यह संस्था जिलेवार कायम की गई थी। इसकी सबसे सुदृढ़ शाखा जिला बाराबंकी में बनी जिसके चेयरमैन बाबू बजरंग बिहारी लाल जमींदार व कांट्रेक्टर ग्रा० न्योछना, परगना–सिद्धौर, तहसील–हैदरगढ़, थाना– कोठी (आजकल थाना जैदपुर में पड़ता है) के थे। लखनऊ में तहसीलों, गावों मलिहाबाद, गोसाईगंज, मोहनलाल गंज में भी यह संस्था फल–फूल रही थी, और सक्रिय थी। बिरतानिया सरकार इनकी जागरूकता पर ध्यान रखे थी।

४. सन् १६३४
दुराचार निवारिणी समिति
इलाहाबाद

पासियों में प्रचलित बिरादरी की पंचायतों का संगठनात्मक स्वरूपों का अध्ययन करने के बाद अंग्रेजों ने इस जाति पर अपना नियंत्रण रखने के लिए तरह–तरह की योजनाएँ बनाते रहते थे। पासी बाहुल्य अवध को हड़पने और पासी राजाओं, सरदारों को समाप्त करने में जिन–जिन कठिनाइयों का सामना अंग्रेजों को करना पड़ा था उनको भूले नहीं थे। पासियों के संगठनात्मक रूप पर अपना वर्चस्व रखकर शासन चलाना चाहते थे। पासियों का वजूद कहीं फिर किसी तरह की परेशानी न उत्पन्न करे ऐसा प्रबंध करना चाहते थे। जरायमपेशा लागू करके इनको बेदखल भी किया गया था। इनकी सांस्कृतिक धरोहर इतिहास को नष्ट किया जा चुका था फिर भी एक अनदेखा भय व्याप्त था। कूटनीति के अंतर्गत ८ अप्रैल १६३४ में इलाहाबाद में पासियों की एक सभा की गई जिसमें अंग्रेजी शासन के तत्वाधान में **''दुराचार निवारिणी समिति''** का गठन किया गया था। इस समिति के अध्यक्ष R. S. Marshsmith, I.P.S. (आर० एस० मार्शस्मिथ, आई० पी० एस०), उपाध्यक्ष T. P. Bhalla, I.P.S. (टी० पी० भल्ला, आई० पी० एस०), प्रधानमंत्री चौधरी रिसाल सिंह, सेक्रेटरी नारायन दास जी चुने गए। अंग्रेजी शासन द्वारा पासियों का हिमायती बन कर अपने नियंत्रण में रखने का यह प्रथम पड़ाव था।

५. सन् १६३५
का
एसेम्बली चुनाव

कांग्रेस पार्टी का गठन हो चुका था। देश की आजादी के लिए सभी कार्य कर रहे थे। १६३५ का एसेम्बली चुनाव आया, उस समय प्रदेश व जिले की सम्पूर्ण पासी पंचायतों ने कांग्रेस पार्टी का साथ दिया। बाराबंकी से एम० एल० सी० के लिए इलाहाबाद के पासी उम्मीदवार बाबू चेतराम जी मैदान में आए और विजय भी प्राप्त की थी।

६. सन् १६३६
आदि हिन्दू डिप्रेस्ड क्लास एसोसियेशन एवं अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ

पासियों ने इसका गठन सन् १६३६ में किया था। वैसे तो यह संस्था सभी निम्न वर्ग की कही जाने वाली जातियों के लिए थी, पर मुख्यतः यह पासियों में काफी लोकप्रिय हुई। क्योंकि इस संस्था के लिए कांग्रेस के राजनेताओं का भी सहयोग मिलता था। सन् १६३६ में **अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ** का अधिवेशन लखनऊ में किया गया जिसकी अध्यक्षता बाबू जगजीवन राम, बी० ए० ने की थी। इसमें पासियों ने बढ़–चढ़ कर भाग लिया था। इसकी शाखाएँ जिलेवार बनाई गईं थीं। बाराबंकी जिले की शाखा के अध्यक्ष बाबू बजरंग बिहारी लाल, उपमंत्री अशर्फीलाल व मा० छत्रपति जी सुपरवाइज़र, लखनऊ के थे। लखनऊ के बाबू राम सहाय पासी भी सहयोगी थे। डिप्रेस्ड क्लास के लक्ष्य एवं उद्देश्य ये थे :–

(a) To diffuse useful knowledge and take steps calculated to promote science and literature among members of Depressed Classes.

(b) To consider and safeguard the interests of the Depressed Classes with loyal cooperation with the Govt.

(c) To maintain separate representation in Local Bodies Legislatures and services in all Govt. departments.

(d) To promote fellow feeling, amity and concord among the members of the Depressed Classes.

(e) To effect social, moral and political reform among its members and to take such steps as well as be condusive to the general economic upliftment of the Depressed Classes.

(N.B. : Depressed Classes represent decendants of ancient ruling races of India.)

७. सन् १६३६
अछूत सभा एवं अखिल भारतीय पासी महासभा
(कार्यालय–दिल्ली)

इन दोनों का मुख्यालय एवं इनकी कार्यकारिणी समिति दिल्ली में थी। अछूत सभा जिलेवार कायम की गई थी, बाराबंकी जिले की अछूत सभा के चेयरमैन बाबू बजरंग बिहारी थे। इन सभाओं के द्वारा सभी अछूतों को संगठित किया जाता था। एक खास बात इन सभाओं के द्वारा बताई जाती थी कि चुनाव के समय वोट किसे दिया जाए इसका निर्णय भी यह सभाएँ तय करती थीं। इनका गठन सन् १६३६ में किया गया था। **अछूत सभा** के साथ ही **अखिल भारतीय पासी महासभा** का भी गठन किया गया था। अखिल भारतीय पासी महासभा बड़े–बड़े अधिवेशन करती थी।

८. सन् १६४०
अवध पासी सभा
(लाहौर)

हिन्दुस्तान के बटवारे के पूर्व लाहौर पंजाब में जहाँ दशहरा लगता था वहीं पर पासियों ने ५ मई दिन रविवार सन् १६४० को एक वृहद सम्मेलन का आयोजन किया था। इसके आयोजक धनीराम पासी थे। इस सम्मेलन में अवध पासी सभा का गठन हुआ जिसके अध्यक्ष धनीराम पासी चुने गए थे।

६. सन् १६४१
डिस्ट्रिक्ट डिप्रेस्ड क्लास एजुकेशन कमेटी, बाराबंकी

अब तक बनी पासी संस्थाओं द्वारा बच्चों को शिक्षा के ऊपर बड़ जोर दिया जाता था। पढ़ाने के लिए सभी पासियों से अपील की जाती थी। सरकार से समय–समय पर वजीफे, निःशुल्क कापी–किताबें, आदि की सुविधा के लिए सरकार को मान पत्र प्रस्तुत किए जाते थे। पासियों की शिक्षा–दीक्षा के लिए जिलेवार कमेटियाँ बनाई गई जिनके क्षेत्र भी तय किए गए थे। इसके तहत सन् १६४१ में बाराबंकी जिले में **डिस्ट्रिक्ट डिप्रेस्ड क्लास एजुकेशन कमेटी** की स्थापना की गई जो सभी अछूतों के लिए शैक्षिक दिशा में काम करती थी। इसके चेयरमैन बाबू बजरंग बिहारी जमींदार व कांट्रैक्टर ग्रा० नेवछना, पो० उधौली, बाराबंकी

चुने गए थे। जिन्होंने वर्नाकुलर स्कूल अपने ग्राम और फार्म पर हाई स्कूल की स्थापना की थी। जिले के सभी पासी मास्टरों को संगठित करके शिक्षा का प्रचार–प्रसार करते थे।

१०. सन् १६४५
अखिल भारतीय पासी महा समाज फैजाबाद

आजादी के पूर्व सन् १६१५ से सन् १६४५ तक पासी समाज के समाज सुधारकों द्वारा किए कार्यो से समाज में जागरूकता का असर दिखने लगा था। पासी अपनी अस्मिता के प्रति सजग हो रहे थे। समाज के विद्वानों द्वारा इनका पिछला इतिहास भी बताया जा रहा था। कुरीतियों में कमी आने लगी थी। चल रहे संगठनों/संस्थाओं के द्वारा आयोजित अधिवेशनों सभाओं से संगठनात्मक एकाग्रता बढ़ी थी। इसकी स्थापना सन् १६४५ में नारायन दास पासी मकबरा बेगम गंज फैजाबाद ने की थी। यह इसके संस्थापक स्थाई अध्यक्ष चुने गए थे। इसके १० उपाध्यक्ष थे। जिसमें पटना सिटी बिहार के सेठ राम खेलावन, कोन्दुआ–काल्टी, वर्दमान बंगाल के सीता राम लखन, बाराबंकी के बाबू बजरंग बिहारीलाल भू. पू. विधायक व मोहन लाल, हरदोई के नेत राम व छोटे लाल, देलही के मास्टर सुमेर सिंह, पंजाब के साधू राम आदि थे। प्रधानमंत्री बाबू जयराम जी एफ. ए., राजा बगान कलकत्ता, मंत्री मा० छत्रपति एस० डी० आई० आलमबाग, लखनऊ, बाबू बलवंतराय एफ० ए०, सरौली केराकत जौनपुर, राम स्वरूप बी० ए० सुल्तानपुर, मा० लालता प्रसाद कानपुर, राम किंकर बी० ए० प्रतापगढ़ के थे। इसके सदस्य नई दिल्ली, पेशावर, पंजाब, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, अवध प्रांत, बंगाल, बिहार आदि प्रांतों के थे। इसका एक बड़ा सम्मेलन सुहावल फैजाबाद, २६ फरवरी सन् १८४८ दिन इतवार को किया गया था जिसके मुख्य अतिथि कुंवर उदय वीर सिंह जाटव पार्ल्यिामेंट सेक्रेटरी, यू० पी० सरकार थे और मौलाना नासिर साहब, मौलाना मुख्तार अहमद किदवई, मौलाना मकबूल साहब, पं० राम नारायन त्रिपाठी, बाबू जयराम वर्मा, पं० राधेराम मिश्र एम० ए० आदि नेताओं ने भी भाग लिया था। सुहावल के **स्व० चैतूराम रावत** जो सुहावल बिजलीघर में फोरमैन थे, ने इस सम्मेलन को सम्पन्न कराने में बड़ी मेहनत की थी।

११. सन् १६६०
उत्तर प्रदेशीय पासी जागृति मण्डल लखनऊ

आल इंडिया पासी महासभा व अखिल भारतीय पासी महासमाज के कार्यो से पासी समाज में चेतना की लहर दिखने लगी थी। राजनैतिक चेतना/जागरूकता के चिन्ह दृष्टिगोचर होने लगे थे। बाबू चेतराम का बाराबंकी से चुनाव जीतना इसका परिणाम था। अंग्रेजी सरकार को अंदरूनी तौर पर यह अच्छा नहीं लगा। ***"फूट डालो राज करो"*** वाली नीति अपना कर १० जुलाई सन् १६३७ को गवर्नर ने ३ वर्षो के लिए बाबू राम सहाय पासी को विधान परिषद का सदस्य नियुक्त किया था। सन् १६३६ में राम सहाय जी को **"राय साहब"** की पदवी

से अलंकृत किया। लखनऊ के पासी **''उत्तर प्रदेशीय पासी जागृति मंडल''** के नाम से पंचायतें करते थे इसको उस समय पंजीकृत नहीं कराया था। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद १६६५ में इसको पंजीकृत कराया गया, इसकी पंजीकृत संख्या ६०५१५ और पंजीकृत कार्यालय ५४/५१२५ वीर नगर उदयगंज लखनऊ में है। इसके अध्यक्ष श्री राम गूजर जी हैं। स्व० महावीर प्रसाद, भूतपूर्व अध्यक्ष ने अपनी अध्यक्षता के समय बिजली पासी किले को संरक्षित करने की माँग रखी थी। १३ सितम्बर सन् ७२–७३ में गोसाईगंज में कांग्रेसी विधायको की देख–रेख में पासियों की एक बड़ी सभा गोसाईगंज, लखनऊ में की थी। यह अपने साथियों के साथ प्रतिवर्ष 'बिजली पासी किले' पर एक समारोह भी करती है।

१२. सन् १६६६
अखिल भारतीय पासी विकास मंडल बम्बई

इलाहाबाद, प्रतापगढ़, जौनपुर और वाराणसी के पासी अपनी रोजी–रोटी कमाने बम्बई नगरी में पहुँचे थे। ये लोग जब घर आते थे तो कार्यरत् पासी संस्थाओं को सहयोग भी देते थे। मुंबई में प्रदेश के विभिन्न जिलों के पासी एकत्र हो कर अपने–अपने इलाके की बातें करते, क्योंकि यह लोग महाराष्ट्र की मराठी भाषा से अनभिज्ञ थे। उस समय सन् १६३२ में शैतान चौकी (दादर) में मिठाई वाली चाल के सामने मैदान में एक महायज्ञ का आयोजन किया गया था। जिसमें पासी भक्त सनातन महासभा के अनुयायी बम्बई वासी इलाहाबाद, जौनपुर आदि के लोगों ने भाग लिया था। कुछ नागपुर, महाराष्ट्र के अहेरिया, बहेरिया वंशी पासियों ने भी हिस्सा लिया था। इन सबों ने अपने आपसी मेल–भाव को बढ़ाया और धीरे–धीरे सन् १६६६ में बम्बईवासी पासियों ने **अखिल भारतीय पासी विकास मंडल, बम्बई** नाम की संस्था को स्थापित करके रजिस्टर्ड करवाया था। यह संस्था बम्बई, (आज मुम्बई) में कार्य कर रही है। इसका पुराना रूप अब प्रायः समाप्त होकर दो भागों में विभाजित हो गई है। यह संस्था एक त्रैमासिक पत्रिका ***''प्रगति-पत्र''*** के नाम से निकालती आ रही है। पहले यह संस्था भारत की हर संस्था के पदाधिकारियों के मुम्बई पहुँचने पर स्वागत सत्कार भी करती थी। इसके कार्यालय शैतान चौकी मिठाईवाली चाल दादर में बाहरी पासी भाइयों के रूकने की भी व्यवस्था है।

१३. सन् १६७८
अखिल भारतीय पासी महासंघ, नई दिल्ली

भारत की समस्त पासी संस्थाओं को एक करने की नियत से सीतापुर मिश्रिख से उत्तर प्रदेश से चुने गए श्री राम लाल राही, संसद सदस्य ने अपने निवास १६४ साउथ ऐवन्यु, नई दिल्ली में २२ मार्च १६७८ को एक पासियों की सभा की। इसके दिल्ली संयोजक श्री देवेन्द्र कुमार राय, संपादक, आकाशवाणी, नई दिल्ली थे। सभा में पासियों का

महासंघ बनाने का निर्णय लिया गया। जिसमें श्री राम लाल राही, संसद सदस्य, अध्यक्ष, श्री ठाकुर प्रसाद, बी० ए०, उप सचिव, से० नि० अम्बाला व श्री रघुनाथ प्रसाद आई० ए० एस० से० नि० भोपाल उपाध्यक्ष चुने गए।

१४. सन् १९८२
पासी समाज
नई दिल्ली

नई दिल्ली, अम्बाला, मेरठ, वाराणसी और फ़ैजाबादवासी पासियों ने मिल कर दिल्ली में १० अक्टूबर १९८२ को सभा करके निर्णय लिया कि एक संस्था दिल्ली में भी होनी चाहिए इसलिए **''पासी समाज''** नाम से गठन करके १५ मार्च सन् १९८३ को इसका पंजीकरण कराया। इसके मुख्य पदाधिकारी ई० श्याम किशोर, श्री खुशीराम पासी, मा० छोटेलाल गूजर, श्री देवेन्द्र कुमार राय आदि थे। इस संस्था ने ''नवप्रभात'' नामक त्रैमासिक पत्रिका भी निकाली जिसमें वैवाहिक और पासी डाइरेक्टरी के कालम निकलते थे। आज भी यह संस्था कार्यरत् है।

१५. सन् १९९०
पासी सामाजिक सेवा संस्थान (पी० एस०³)
का०क्षे० सम्पूर्ण भारत, **लखनऊ**

सन् १९१५ से सन् १९८० तक के समय में पासी सामाजिक संस्थाओं ने राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों में काफी परिवर्तन कर दिया। हर संस्था का अपना–अपना योगदान पासी समाज में गया। कुछ आंतरिक मतभेद भी हुए जो कि स्वाभाविक है। साहित्य के क्षेत्र में किसी संस्था का उतना योगदान देखने में नहीं मिला। हालांकि पासी मित्र *पासी, पंच–परमेश्वर, प्रगति, पासी दर्पण, नवप्रभात, प्रगति–पथ* पत्रिकाएँ निकली पर कोई भी जनसाधारण में छाप न छोड़ पाई। सन् १९४५ में स्व० नारायण दास पासी द्वारा लिखित पुस्तक ***''पासी वंश उत्पत्ति''*** ने अपना एक स्थान बनाते–बनाते रूक गई। मुंशी फंकीरेलाल पी.टी. रसौली, बाराबंकी की पुस्तक *पासी कुल दर्पण* व नारायन परासर, उन्नाव की *पासी उत्पत्ति* यह लघु पुस्तिका भी फीकी पड़ गई। कारणों पर न जाकर हम इतना ही कहेंगे कि सृजित साहित्य में इतिहास तथ्य तो है पर प्रमाणित आधार जनसाधारण पर खुलासा नहीं हो पाए और न ही किसी संस्था ने साहित्य की आवश्यकता के लिए कार्यक्रम ही चलाया। केवल मंचों से भाषण में ही कहते थे कि इतिहास नहीं है, दबा दिया गया है। संस्थाएँ केवल वोट की राजनीति की शिकार बन कर रह गई।

साहित्य के क्षेत्र में सन् १९१५ से अपनी सामर्थ्यनुसार पासी संस्थाओं ने कुछ पत्र व पत्रिकाओं के माध्यम से प्रचार– प्रसार किया था। बाद में १९४५ से ''पासी वंश उत्पत्ति'' नाम की एक पुस्तिका भी निकाली थी। कारण शैक्षिक विकास का और यह भी था कि उस समय के प्रबुद्ध लेखकों, साहित्यकारों को भी अपनी ओर आकर्षित न कर पाना। इन सब कारणों के अतिरिक्त

१४६वें बलिदान दिवस पर स्वागतभाषण करते हुए श्री के.के. रावत, अध्यक्ष पी.एस.३, स्थानः टेरा, दौलतपुर, बाराबंकी दिः १८.६.६८

एक खास वजह यह भी थी कि शासन में पासियों की संगठनात्मक शक्ति देखकर हिमायती गुट और गैर–हिमायती गुटों को पैदा करके साहित्य सृजन की ओर से इनका ध्यान अलग करवाया था। सरकार जानती थी कि यदि इनके समृद्ध साहित्य इतिहास लिपिबद्ध हो गए तो हमारी वर्चस्वता समाप्त हो जाएगी। कमोवेश आज भी शासन की वही मानसिकता दिख रही है। जिस समाज में उसका साहित्य नहीं होता है वह मुर्दा होता है क्योंकि साहित्य समाज का दर्पण है। यह कमी मुझे (के० के० रावत) काफी दिनों से सालती रहती थी। मैंने इस पर कुछ कार्य सन् १६७७ से करना शुरू किया और अवध के पासियों का इतिहास ढूँढ–ढूँढ कर निकाला। तिनके–तिनके जोड़ कर प्रमाणित पासी राजा गंगा बक्स रावत का इतिहास खोज कर संकलित करके लिपिबद्ध किया। सन् १६८० में स्व० धर्मवीर जी अध्यक्ष कांग्रेस कमेटी के यहाँ प्रदेश के पासी विधायकों से परिचय हुआ। अपने पासी इतिहास के बारे में बताया ही नहीं दारूल शफा में पासी विधायकों के यहाँ २–२ घंटे रात में सुनाता रहता था। सभी सराहना करते, प्रशंसा के पुल बाँधते थे। छपवाने के लिए हाँ–हाँ करते, पर आगे कभी नहीं आए। कुछ विधायक आज भी विधायक हैं। मैं परेशान, संस्थाओं से सम्पर्क करता रहता था। किसी ने नकारा नहीं पर उंगली भी नहीं छूने दी। पासी मंत्रियों के पास दिन–रात रहते हुए भी कोई प्रोत्साहन नहीं मिला। शायद यह दबी मानसिकता का प्रतीक था। उसी दौरान श्री संकटा प्रसाद जी राज्य सभा के लिए चुने गए थे। उनके निवास गुरूद्वारा रोड दिल्ली गया। प्रकाशन हेतु बात–चीत की, उन्होंने कहा दिल्ली से पासी इतिहास की एक बहुत बड़ी शोधपूर्ण पुस्तक निकल रही है। उसी में इसको भी शामिल किया जाएगा। मैंने (के० के० रावत) पूरी फाइल सौंप दी। काफी दिनों बाद मालूम किया तो उत्तर मिला छप रही है। महीनों गुजर गए तीन–चार बार दिल्ली के चक्कर भी लगा आया पर छपी पुस्तक न मिली आखिरकार छपने का स्थान एवं छपवाने वाले का नाम जानना चाहा तो इधर–उधर की बातों से संतुष्ट करना चाहा, अंत में मैंने अपनी पांडुलिपि माँगी तो टाल–मटोल कर के टाला। मैं असहाय निराशा से भरा लौटा, मेरी हिम्मत और विश्वास का जनाजा निकल चुका था। कुछ दिनों बाद यह भी देखने को मिला कि मेरी ही खोज को कुछ लोग शब्दों के हेर–फेर से मुझे ही सुनाने लगे। पर मूल, मूल ही होती है, नकल, नकल ही। मैंने पुनः अपने कुछ बचे पन्नों को समेट कर दुबारा अपना लेखन कार्य शुरू किया। उस समय की सामाजिक संस्थाओं के पास भी अपना मंतव्य प्रकट किया, समाज के अधिकारियों से भी सम्पर्क

साधा पर किसी ने मेरे परिश्रम को प्रोत्साहन देने की पहल नहीं की। भटकने के बाद बात समझ में आई कि अपनी बात को कहने के पहले मुझे बात को सुनने वाले ढूँढने होंगे।

भटकाओ के बाद विचार बना कि साहित्यिक रूचि के लिए संगठन बनाया जाए। लेकिन कैसे? लोगों से बात की, सबने अच्छा कहा, लेकिन कोई सहयोग नहीं मिला। क्योंकि न मैं विधायक था, न उत्तर प्रदेश सरकार में अधिकारी था, न ही P.W.D. या Irrigation में इंजिनियर, मैं तो केन्द्रीय सरकार के रेल मंत्रालय के अनुसंधान संगठन में अनुसंधान अभियन्ता जहाँ कोई व्यक्ति नहीं जाता, न ही किसी का काम पड़ता था, लोग जानते भी नहीं हैं। मैं निराश तो हुआ पर हिम्मत न हारी। संगठन को बनाने के पहले अनुसंधान के अनुसार पासी समाज का पूरा सर्वे करके लोंगों के विचारों को इकट्ठा करने का निश्चय किया। इसके लिए सर्वप्रथम एक महीने के परिश्रम से तीस प्रश्नों का, प्रत्येक के तीन उत्तरों से एक फॉर्म तैयार किया। जिसको सभी पासी भाइयों से पूछ–पूछ कर या उन्हें देकर एक उत्तर पर सही चिन्ह का निशान लगवाता था। फिर उन उत्तरों से समाज की कमी, संगठन की अच्छाईयों, साहित्य के बारे में लोगों के रूझान का पता लगता था। इस कार्य में साथी श्री कृष्णराज (C.D.R.I. में वैज्ञानिक हैं) और श्रीकृष्ण वर्मा जी New India Insurance में प्रशासनिक अधिकारी हैं ने सहयोग किया। यह वह समय था जब DS4 का बोलबाला था। पासी समाज के अधिकतर लोग माननीय काशीराम जी के साथ जुड़े थे। दो–तीन वर्षो में, मैंने बंगाल, बिहार, टाटानगर, महाराष्ट्र, अंबाला, दिल्ली, गुजरात, मध्य–प्रदेश और उत्तर प्रदेश के पासी बाहुल्य क्षेत्रों में जाकर पासी भाईयों से संपर्क स्थापित कर

देवा मेले में श्री उदयवीर सिंह यादव, उपजिलाधिकारी, सदर नवाबगंज को श्री के.के. रावत सम्मानित करते हुए (1998)।

लिया था। इन क्षेत्रों में मैं अपने अनुसंधान कार्य हेतु जाता था तो वहाँ पर पता लगा कर सायंकाल को मिलता था। फॉर्म भरवाना और अपनी पासी खोज से अवगत कराता था। इस कार्य का परिणाम **यह निकला कि सभी लोग सामाजिक मंच और पासी साहित्य चाहते हैं पर राजनैतिक व महात्वाकांक्षी धारणा से अलग रहना चाहते है।**

सर्वे से यह मालूम हो गया कि अधकचरे साहित्य से समाज में भ्रांतियाँ फैली हैं। सामाजिक विकास के नाम पर राजनैतिक महात्वाकांक्षा का शिकार हो रहा है, जिससे समाज में एक बिखराव पैदा हो गया है। सबसे पहले यही सोचा गया कि साहित्यिक विचारधारा को बढ़ावा देने के साथ समाज की सांस्कृतिक धरोहरों के बारे में भी प्रमाणिक जानकारी उपलब्ध करायी जाए अतः सर्वश्री बलवंत राय एम.ए., एलएल. बी., सं. निदेशक, सेवा निवृत, काशी प्रसाद अति. निदेशक वित्त सां. निदेशालय, भुईयादीन पी.सी.एस., शीतला प्रसाद पुलिस इंस्पेक्टर, जगतपाल आई.ए.एस., ए.के. लाल, अमरनाथ सरोज, सुरेश चन्द्र रावत, शम्भू दयाल रावत, राम दुलारे रावत, किशोरी बाबा आदि लोगों की कई मीटिंगें संजयपुरम मेरे निवास पर की गई। विचार–विमर्श भी हुआ कितने ही गैर–राजनैतिक विचार धारा के प्रबुद्ध जनों ने पासी समाज के विकास में अपनी–अपनी बहुमूल्य राय दी। यह कार्यक्रम १६८७ से १६६० तक चलता रहा। आखिरकार सन् १६६० में श्री काशी प्रसाद के सहयोग से इसकी नियमावली बनाकर **'पासी सामाजिक सेवा संस्थान'** (कार्यक्षेत्र–सम्पूर्ण भारत) के नाम से पंजीकृत कराया, इस कार्य में माननीय श्री जगतपाल आई०ए०एस० ने बड़ी सहायता एवं मार्ग–दर्शन किया। के. के. रावत को सर्वसम्मति से अध्यक्ष व श्री भुईयांदीन क़ो उपाध्यक्ष चुना गया। आज यह संस्थान अपने विशिष्ट कार्यो एवं साहित्यिक सेवाओं के कारण भारतवर्ष के आठ–नौ प्रांतों में बड़ी अच्छी तरह जाना जाता है। पासी समाज का प्रमाणिक इतिहास व पासी वंशावली प्रस्तुत करने के लिए इसकी पहचान है। इस संस्था ने सन् १८३६ से १८५० तक के पासी राजा गंगा बक्स रावत, कासिमगंज देवा, बाराबंकी में अंग्रेजों द्वारा ध्वस्त किए गए किले को प्रशासन से संरक्षित करा कर भू–अभिलेखों में दर्ज करवाया है। प्रति वर्ष प्रसिद्ध देवा बाराबंकी के मेले में पासी राजा गंगा बक्स रावत के नाम से शिविर लगाता है जिसका उद्घाटन उपजिलाधिकारी, सदर, सचिव देवा मेला बाराबंकी के करकमलों द्वारा होता है जिसमें देवा मेला कमेटी के सभी मेम्बरान सम्मिलित होते हैं। राजा गंगाबक्स रावत का जीवनवृत यह सिद्ध करता है कि प्रथम स्वतंत्रता संग्राम तक पासी राजाओं का अस्तित्व था।

१६. सन् १६६३
अखिल भारतीय पासी समाज ट्रस्ट , नई दिल्ली

पासी सामाजिक सेवा संस्थान (पी. एस. ३) के कार्यक्षेत्र के विस्तार को देखते हुए लोगों की जागरूकता में तीव्रता आई। लोगों ने पासियों के राजनैतिक रुझान को देखकर ही सन् १६६३ में **अखिल भारतीय पासी समाज ट्रस्ट** को नई दिल्ली में पंजीकृत

कराया जबकि पासी समाज पहले से ही कार्य कर रहा था। इस ट्रस्ट का द्वितीय वार्षिक सम्मेलन नई दिल्ली के रफ़ी मार्ग पर बने मालवंकर ऑडिटोरियम में २५ सितम्बर १६६४ को आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में भारत सरकार के मंत्री, सांसद, अधिकारियों, उत्तर प्रदेश व बिहार सरकार के मंत्री व अधिकारी, महाराष्ट्र, चंडीगढ़, हैदराबाद के पासियों को बुलाया गया था। मुझ (के० के० रावत) को भी आमंत्रित किया गया था। इस ट्रस्ट के संस्थापक श्री महावीर प्रसाद, विधायक एवं पूर्व मंत्री बिहार (राज्य), अध्यक्ष श्री रामलाल राही सांसद, गृह उपमंत्री भारत सरकार, महामंत्री श्री डी० के० राय आकाशवाणी नई दिल्ली, कोषाध्यक्ष श्री आई० डी० पासी थे। अखिल भारतीय पासी समाज ट्रस्ट के सचिव श्री राम आसरे प्रसाद आई०ए०एस० हैं।

१७. सन् १६६३
अखिल भारतीय पासी समाज समिति, उज्जैन

मध्य प्रदेश की प्राचीनतम नगरी उज्जैन में भी पासियों की संख्या कम नहीं है यहाँ के पासियों ने मिल कर आपसी मेल भाव को और सुदृढ़ करने के लिए अखिल भारतीय पासी समाज समिति, उज्जैन का पंजीकरण कराया। यह समिति प्रतिवर्ष एक परिचय सम्मेलन करती है, इसी के साथ सामूहिक वैवाहिक कार्यक्रम का आयोजन भी करती है। श्री नरेन्द्र कुमार बौरासी जी इसके अध्यक्ष हैं तथा पासी सामाजिक सेवा संस्थान (कार्यक्षेत्र–सम्पूर्ण भारत) लखनऊ से बराबर संपर्क रखते हैं। यह पासी समाज में सामूहिक विवाह का आयोजन कराने वाली पहली समिति है।

१८. सन् १६६४
महाराजा बिजली पासी स्मारक सांस्कृतिक ट्रस्ट, लखनऊ

६ अप्रैल '६४ में लखनऊ स्थित बंगला बाजार के बिजली पासी के किले पर उत्तर प्रदेशीय पासी जागृति मंडल के तत्वाधान में आयोजित राज्यारोहण समृति समारोह में माननीय मुख्यमंत्री श्री मुलायम सिंह जी ने १५ लाख रूपया पासी किले के रख–रखाव के लिए देने की घोषणा की थी। श्री संत बक्स रावत उस समय शासन में मंत्री थे। १५ लाख रूपये को प्राप्त करने व रख–रखाव के लिए एक ट्रस्ट बनाने की योजना बनी। उत्तर प्रदेशीय पासी जागृति मंडल ने लोगों के साथ मिलकर २७.४.६४ को **महाराजा बिजली पासी स्मारक सांस्कृतिक ट्रस्ट** का गठन किया। इसके अध्यक्ष श्री संत बक्स रावत जी, उपाध्यक्ष बी. एन. रावत, श्री राम लखन जी, महामंत्री, सुन्दरलाल सरोज, कोषाध्यक्ष और मंडल के ही सदस्य ट्रस्टी बने वहीं श्री जगजीवन प्रसाद व श्री सरस्वती प्रसाद रावत व श्री राय सिंह I.A.S. आदि को भी सदस्य बनाया गया।

१६. सन् १६६५
वीरांगना उदादेवी स्मारक संस्थान, उ० प्र०

महाराजा बिजली पासी स्मारक सांस्कृतिक ट्रस्ट के पूर्व उ०प्र० पासी जागृति मंडल सन् १६७३ में स्थापित अज्ञात वीरांगना का शहीद दिवस प्रतिवर्ष मनाती थी। जिसमें पासी समाज के सभी

लोग इकट्ठे हो कर कार्य करते हैं। श्री राम लखन महामंत्री, महाराजा बिजलीपासी स्मारक सांस्कृतिक ट्रस्ट ने एक बैठक का आयोजन एक अधिकारी के यहाँ करके महिला उत्थान के कार्यक्रमों को बढ़ावा देने की नियत से महिलाओं के नाम पर **'वीरांगना उदादेवी स्मारक संस्था'** बनाने का प्रस्ताव रखा और बैठक से पारित करवा लिया उसमें लगभग ५२ सदस्य थे। इसको पंजीकरण कराने के पूर्व मेरे (के. के. रावत) सुझाव पर 'समिति' के स्थान पर 'संस्थान' नाम मान लिया गया था। इसको पंजीकृत कराने सर्व श्री राम लखन, के. के. रावत, जगजीवन प्रसाद, लक्ष्मी प्रसाद रावत विकास दीप गए थे। इस संस्थान के संरक्षक सर्व श्री राम कृष्ण आई.ए.एस. व श्री संत बक्स रावत, अध्यक्षा श्रीमती सुशीला सरोज व महामंत्री श्री राम लखन बनाए गए। शहीद **'उदादेवी'** को आज के स्तर पर पहुँचाने का कमोवेश श्रेय इसी को जाता है। यह सक्रिय रूप से कार्य कर रही है। सन् १९९५ के पूर्व मंडल के द्वारा प्रतिवर्ष १६ नवम्बर को मनाए जा रहे शहीद दिवस को अब यह संस्थान मनाता है। सभी पासी संगठनो, संस्थाओं, संस्थानों एवं पासी समाज के लोग इकट्ठे होते हैं। जिसमें राष्ट्रीय स्तर का नेता मुख्य अतिथि होता हैं। १६ नवम्बर १९९७ के समारोह में मुख्य अतिथि माननीय श्री राम विलास पासवान रेल मंत्री, भारत सरकार थे। उसी समय वीरांगना उदादेवी की पूर्व लगी प्रतिमा के साथ अज्ञात से ज्ञात उदादेवी का पत्थर वीरांगना उदादेवी स्मारक संस्थान ने लगाया जिसका अनावरण माननीय मुख्य अतिथि से कराया था। इसी समारोह में श्री राम विलास पासवान जी को इस संस्थान का आजीवन संरक्षक बनाया गया जिसकी घोषणा महामंत्री, संस्थान श्री राम लखन जी ने की थी।

२०. सन् १९९९
पासी सामाजिक सेवा संस्थान पी०एस०³, शाखा उज्जैन

पासी सामाजिक सेवा संस्थान की साहित्यिक सेवाओं, पासी समाज की ऐतिहासिक जानकारी एवं गैर–राजनैतिक विचारधारा से परिचित होने के बाद उज्जैन के पासी समुदाय ने रचनात्मक कार्यो को करने का फैसला करके पी०एस०³ की एक शाखा सन् १९९९ में कायम की। उज्जैन की इस शाखा के अध्यक्ष श्री श्यामलाल कैथवास और शाखा सचिव श्री भूषण चौधरी बी.ई. को सर्वसम्मति से बनाया गया। यह शाखा पी०एस०³ के कार्यक्रमों का प्रचार–प्रसार करती है तथा पासी समाज के प्रमाणिक इतिहास को बता कर पासी समाज की अस्मिता को आगे बढ़ा रही है। यह शाखा प्रधान पंजीकृत कार्यालय संजयपुरम, इंदिरा नगर, लखनऊ के कार्यक्रमों के अनुसार कार्य करती है।

२१. सन् १९९७
राष्ट्रीय पासी समाज वैवाहिक परिचय मंडल, मुम्बई

मुम्बई की संस्था अखिल भारतीय पासी विकास मंडल के संस्थापक सदस्यों और कुछ नए पदाधिकारियों सर्वश्री डा० रामदुलार सरोज, श्री रामकरण भारतीय,, डा० एस.आर. सरोज आदि पदाधिकारियों

ने सामाजिक विकास के लिए **राष्ट्रीय पासी समाज वैवाहिक परिचय मंडल, मुम्बई** के नाम से एक अलग संस्था गठित कर ली। इस संस्था ने ***मानस दर्पण*** त्रैमासिक पत्रिका भी निकालना शुरू कर दिया। जिसमें समाज के वैवाहिक विज्ञापन एवं प्रमाणिक इतिहास पासी समाज को उपलब्ध करा करती है तथा उज्जैन की पासी समाज समिति की तरह सामूहिक वैवाहिक कार्यक्रम व परिचय समारोहों का आयोजन भी करती है अब तक यह दो आयोजन कर चुकी है। इसके अध्यक्ष श्री रामकरण भारतीय तथा अन्य पदाधिकारियों में डा० रामदुलार सरोज, डा० एस.आर. सरोज आदि हैं। इसका कार्यालय इंदिरा नगर, चार बंगला के पास अंधेरी वेस्ट, मुम्बई में है। यह संस्था पासी सामाजिक सेवा संस्थान लखनऊ से बराबर संपर्क रखती है इसके कार्यक्रमों को भी प्रसारित करती है। मुम्बई में यह काफी लोकप्रिय हो रही है।

२२. सन् १९९७
महाराजा बिजली पासी एवं वीरांगना उदादेवी स्मारक ट्रस्ट

सन् १९९४ में बने महाराजा बिजली पासी सांस्कृतिक स्मारक ट्रस्ट के महामंत्री श्री राम लखन ने माननीय लालजी टंडन, मंत्री, नगर विकास उ०प्र० से संपर्क स्थापित करके बिजली पासी किले की भूमि को हस्तांतरित करने की बात की जिन्होंने बताया कि किले की भूमि सौंपने पर सहमत हैं परन्तु इसके लिए एक अलग ट्रस्ट बनाना होगा। श्री राम लखन महामंत्री ने महाराजा बिजली पासी एवं वीरांगना उदादेवी स्मारक ट्रस्ट का गठन करके पंजीकृत करवाया और इसके अध्यक्ष श्री जयप्रकाश सांसद, भाजपा और महामंत्री श्री राम लखन बने।

नोटः इसके गठन की जानकारी इस लेख के लिखते समय श्री राम लखन महामंत्री, वीरांगना उदादेवी संस्थान, ने स्वयं दी। अब तक लखनऊ के पासी समाज में लगभग चार या पाँच ट्रस्ट बन गए हैं।

२३.
राजनीति की चपेट में पासी समाज

राजनैतिक उथल–पुथल में उ०प्र० में कई चुनाव हुए। जनता उहापोह में पड़ गई। राजनैतिक पार्टियाँ अपने–अपने वोट बैंक संभालने लगीं थीं जातिवाद वोट बैंकों का बोलबाला हुआ उसी की चपेट में आया पासी समाज। अप्रैल '९४ के समारोह में माननीय श्री मुलायम सिंह मुख्यमंत्री ने भारी जनसमूह के समक्ष बिजली पासी के किले पर १५ लाख रूपये और किले की भूमि देने की घोषणा की थी। रूपया तो मिल गया पर भूमि हस्तांतरित नहीं हो पाई। पासी समाज टकटकी लगाए देखता रहा। सरकार बदली। सुश्री मायावती की सरकार आई तो पासी वोट बैंक अपने पक्ष में करने के लिए बिजली पासी का सौन्दर्यीकरण तो कराया पर किले को हस्तांतरित नहीं किया। राजा बिजली पासी स्मारक एवं सांस्कृतिक ट्रस्ट और मंडल अपने प्रयासों में लगे रहे तब तक ब.स.पा. की सरकार चली गई। भारतीय जनता पार्टी की सरकार आई।

२४. सन् १९९८
वीर शिरोमणि महाराजा बिजली पासी बहुद्देशीय कल्याण ट्रस्ट

मई १९९८ को उ० प्र० पासी जाग्रत मंडल व श्रीमती पूर्णिमा वर्मा पूर्व सांसद मोहनलालगंज, के प्रयासों से एक प्रतिनिधि पासी सम्मेलन गन्ना संस्थान में माननीय मुख्यमंत्री श्री कल्याण सिंहजी के अभिनंदन के लिए कराया गया। जिसमें माननीय मुख्यमंत्रीजी ने बिजली पासी किले को पासी समाज को सौंपने की, बिजली पासी महाविद्यालय की स्थापना, माल में वीरांगना उदा देवी के नाम से कन्या इंटर कॉलेज खोलने, २५ लाख रूपये की स्वीकृति और सिकंदरबाग चौराहे पर वीरांगना उदा देवी पासी की नौ फिट ऊँची प्रतिमा लगवाने की घोषणा की। यह भी कहा कि सभी पासी संस्थाएँ को मिलाकर एक ट्रस्ट गठित कर लें। २४ मई १९९८ को **वीर शिरोमणि महाराजा बिजली पासी बहुउद्देशीय कल्याण ट्रस्ट** का गठन किया गया जिसकी अध्यक्षा श्रीमती पूर्णिमा वर्मा, पूर्व सांसद भाजपा और महामंत्री श्री रामआसरे प्रसाद, आई.ए.एस. को बनाया गया। १२ नवम्बर को माननीय श्री कल्याण सिंह, मुख्यमंत्री जी ने सिकंदरबाग चौराहे पर वीरांगना उदा देवी पासी की प्रतिमा का अनावरण कर लोकार्पण किया। इस तरह सिकंदरबाग चौराहा पासी समाज के नाम से इंगित हो गया।

हम इतने अनजान भी नहीं कि यह मान लें कि कभी ऐसा समय आएगा जब समाज में दोष नहीं होंगे किन्तु इसका अर्थ यह भी नहीं कि जिन दोषों को हमने पहचान लिया है उन्हें दूर करने, अभावों पर काबू पाने या आदर्श की ओर बढ़ने का प्रयास ही न करें।

परिस्थितियों का सामना करने में, आकांक्षाओं की पूर्ति में कठिनाइयों का आना तो निश्चित ही है परन्तु इसका अर्थ यह तो नहीं कि निश्चित उद्देश्य की दिशा में प्रयास को ही त्याग देना चाहिये।

-- *अडोल्फ हिटलर*

पवाँरा कथा

सिंदूरी लाज

(वीरवर बेनू की कथा)

✍ बलवंतराय, एम.ए.

महत्वाकांक्षी अफ़गान शेर ख़ाँ ने बिहार और बंगाल पर अपना अधिकार जमा कर हुमायूं को चौसा के युद्ध में हरा दिया था। चौसा के युद्ध में हुमायूं की हार के बाद शेर शाह के पुत्र जलाल ख़ाँ ने चुनार घेर लिया और इसकी दूसरी सैनिक टुकड़ी ने बनारस से आगे जौनपुर पर घेराबंदी कर ली। चुनार के किले में नियुक्त मुगल सरदार रुमी ख़ाँ गंगा नदी पार कर ग्रैंड ट्रंक रोड की राह से पश्चिम को भागा। रुमी ख़ाँ अपनी सैनिक टुकड़ी लेकर जौनपुर की ओर मुड़ चला ताकि वह जौनपुर को जलाल ख़ाँ के घेरे से मुक्त करा सके। दूसरा कारण ग्रैंड ट्रंक मार्ग छोड़ने का यह था कि बनारस से जलाल ख़ाँ की एक सैनिक टुकड़ी पीछा कर रही थी। रुमी ख़ाँ की सेना को मछली शहर होकर जौनपुर पहुँचना था परन्तु मछली शहर से पूर्व वरूणा तट पर उसकी मुठभेड़ कुँवर विजय की सेना से हो गई जो भदौर स्थित अपने महल से निकल कर वरूणा नदी में स्नान के लिए गए थे। मुगल सेना को अपनी ओर आते देख मुकाबले के लिए अपनी सेना को बुलाया जिसका नेतृत्व ***पासी सरदार बेनू*** के हाथ में था। मुग़ल सेना वरूणा नदी के तट से कुछ ही दूर एक बड़ी बाग जिसे **'बेड़ी बाग'** के नाम से पुकारा जाता था, में विश्राम कर रही थी।

वीरवर बेनू पासी के सात पुत्र थे जो बहुत बहादुर थे। पिता और सातों पुत्र कुँवर विजय की सेवा में ओहदेदार थे। मुगल सेना से युद्ध के दो ही दिन पूर्व छोटे पुत्र मनोहर का गौना आया था। मनोहर अपनी सुहागरात की मधुर बेला के क्षणों में खोया प्रातः आठ बजे तक अपने बिस्तर में पड़ा हुआ सुखद आनन्द ले रहा था उसी समय कुँवर विजय का आह्वान पहुँचा कि वीरवर बेनू सरदार अपने सातों पुत्रों सहित राज्य की सेना के साथ राज्य की रक्षा हेतु वरूणा तट पर पहुँचें जहाँ कुँवर विजय शत्रुओं के घेरे में आने ही वाले हैं। सेना के कूच करते समय अपने छः पुत्र ही सम्मुख उपस्थित देखकर मनोहर की अनुपस्थिति से बेनू सरदार क्रोधित हो उठा। उसके मुँह से मनोहर के प्रति कुछ शब्द निकलते इसके पहले मनोहर की माँ ने विनम्र शब्दों में बताया कि " मनोहर का कल ही गवना आया है पुत्रवधू सहित वह शयन–कक्ष में है, आज उसे घर पर ही रहने दें "। बेनू ने अपने क्रोध को रोक कर कहा " वह मर्द नहीं, नारी है? जिसने लाज ही खो दी "। बेनू ने छः पुत्रों व सैनिकों के सैन्य दल के साथ सुसज्जित होकर वरूणा तट की ओर प्रस्थान किया। पिता के व्यंग वचनों को पुत्रवधू सुन रही थी उससे रहा नहीं गया। वह कुछ कहती इसके पहले गाँव की खड़ी एक मुराइन ने भी व्यंग कसा कि नौजवान बेटा घर पर सो रहा है और बूढ़ा बाप लाम पर

जा रहा है। मनोहर की बहू ने अपने पति को जगाया और कहा कि "आप के पिता अपने छः पुत्रों के साथ युद्ध–स्थल की ओर रवाना हो चुके हैं और आप अभी तक सो रहे हो? पिताजी ने जो वचन कहे वह मेरे हृदय में चुभ रहे हैं और वह मुराइन की बच्ची भी सुना गई है कि बूढ़ा बाप लाम पर जाए और जवान बेटा घर में सोए।" इतना सुन कर मनोहर तुरंत पलंग से उछल पड़ा। मनोहर की पत्नी ने कहा यदि तुम न जा सको तो मुझे तलवार दो मैं युद्ध करने जाऊंगी। मनोहर ने कहा "प्रिये! तुम मुझे शर्मिंदा न करो, मैं हुआ झट तैयार और तुम लाओ मेरी तलवार"। मनोहर की पत्नी ने तलवार दी और तिलक लगा कर पति को विदा करते हुए कहा कि मेरे सिंदूर की लाज रखना। मनोहर वरूणा तट पर एकत्रित कुँवर विजय की सेना में तलवार लिये सम्मिलित हो गया। उसे (मनोहर) सुअवसर न खोते देख पिता बेनू की आँखों से आँसू छलछला उठे और भरे गले से कहा "शाबाश बेटे! अब हमारा **अष्ट प्रहार** सफल होगा"। कुँवर की सेना वरूणा पार करके बेड़ी बाग में ठहरी मुगल सेना पर टूट पड़ी। भयानक युद्ध हुआ, बहुत से मुगल सैनिक हताहत हुए, बचे हुए भाग चले। मनोहर के युद्ध से बहुत से सैनिक मारे गए पर वरूणा तट पर पासी सरदार वीर मनोहर अपने राज्य की रक्षार्थ शहीद हो चुका था। अपनी सेना की विजय श्री से बेनू सरदार गर्वित थे पर पुत्र मनोहर के खोने का दुख भी अपने हृदय में आत्मसात किए हुआ था।

इस विजय श्री के मिलने से कुँवर के राज भदौर में सरदार बेनू पासी और उनके पुत्रों, व पासियों के योगदान से बेनू की ख्याति बढ़ गई थी। राजा उन्हें आदर की दृष्टि से देखते थे परन्तु यह सब राजा के मंत्रीमंडल और अन्य चमचेबाज सैनिकों को अखरने लगा था। मंत्री–परिषद की वर्णाभिमानी लाबी में खलबली मच गई। उन लोगों ने एक व्यूह रचना करके राजा को सुझाव दिया कि विधर्मियों से राज्य और धर्म की रक्षा के लिए सूकर पालन आवश्यक होगा और इस कार्य को बेनू पासी तथा उसके समुदाय के लोग भली–भांति कर सकते हैं क्योंकि बनैलों (सूकरों) को पकड़ने में वे माहिर हैं। राजा को मंत्री–परिषद की सलाह कारगर लगी। उन्होंने बेनू सरदार को बुलाकर राज्य और धर्म की रक्षार्थ का प्रश्न बताते हुए उक्त प्रस्ताव सामने रखा। बेनू ने साफ–साफ इन्कार किया और कहा कि क्या वह अपनी विजय का तोहफा उन्हें और उनके समुदाय जनों को दे रहे हैं? बनैलों (सूकर) का शिकार करना और बात है उसका पालना अशोभनीय बात है। राजा के बहुत समझाने के बाद जब बेनू सरदार राजी नहीं हुए तो कहा कि इसको राजाज्ञा न समझकर मेरा विनम्र निवेदन मानें। बेनू ने कहा कि महाराज यदि आपकी मजबूरी है तो मैं अपना फ़र्ज अदा करूंगा, परन्तु उन सूकरों के अमानी विचरण के लिए पर्याप्त भूमि सुरक्षित करनी होगी। उनके भोजन आदि का प्रबंध ा राजकोष से करना होगा। राजा ने बेनू सरदार की बातों को मानते हुए सूकरों के लिए **२२६२ बीघा** भूमि आवंटित कर दी। जंगलों से एक बड़ी तादाद में सूकरों को पकड़वा कर सुरक्षित भूमि के चारों ओर बंधी बनाकर उन्हें डाल दिया गया। इस राजकीय बाड़े के एक ओर मुराइन के कोड़ार (सब्जी) के खेत थे और दूसरी ओर अन्य किसानों की काश्तकारी की भूमि थी। चार–छः माह बाद एक रात्रि

को सूकरों ने खाई की बाड़ को थूथनों से खोद–खोद कर गिरा दिया और कोड़ार के खेतों में लगी हुई साग–सब्जी तहस–नहस कर डाली। मुराइन राजमहल में सब्जी पहुँचाने के कारण राजा की मुँह लगी हो गई थी उसने अपने नुकसान की शिकायत राजा से करके बेनू को दण्ड देने और हर्जाना दिलवाने की मांग की। मुराइन की जिद्द पर राजा ने बेनू सरदार पर भारी हरजाना लगाया और हरजाना न देने की स्थिति में राज्य से निष्कासन का दण्ड सुनाया। बेनू सरदार ने हरजाना देने से इन्कार किया और कहा कि मुराइन की फसल की नुकसान की भरपाई राजकोष से की जाए और राज्य अपने कोष से रखवालों को रखे। यह भी कहा कि मैंने या पासी समुदाय ने सूकरों की रखवाली का कोई वादा नहीं किया था। बात मंत्री–परिषद में पहुँची तो वहाँ से उत्तर मिला कि कोष में इतना पैसा नहीं है। बेनू सरदार ने कहा कि जब राज्य कोष की क्षमता हरजाना देने की नहीं है तो भला उनके पास कहाँ से होगी, वह कुँवर का राज्य छोड़कर अन्यत्र बसने को तैयार हैं। बेनू सरदार अपने परिवार और समुदाय सहित **भदेवर** राज्य की सीमा से बाहर जाकर बस गए और उस बस्ती का नाम **बेनूपुर** रखा। कुछ काल बाद शेरशाह की सेना भदेवर राजा के राज्य पर चढ़ाई की। उस संकट की घड़ी में राजा को बेनू की याद आई। उन्होंने निष्कासन के दण्ड को माफ करते हुए राज्य की रक्षा के लिए बेनू सरदार को सहायता के लिए पत्र भेजा। बेनू सरदार ने राजा का निवेदन अस्वीकार कर दिया। राजा अपनी कमजोरी देखकर शेरशाह से सुलह कर आधीनता स्वीकार कर ली।

(यह ऐतिहासिक विवरण जौनपुर में गाये जाने वाले 'पवारा गीतों'/जन श्रुतियों से सुलभ हुआ है जो लिपिबद्ध नहीं किया गया है – लेखक)

अस्मिता भाग दो
के प्रमुख आकर्षण।

- 1915 से आज तक के किए गए अधिवेशनों सम्मेलनों का विवरण।
- पासी समाज के समाज सेवी/राजनैतिक/स्वतंत्रता/सेनानी जो अब नहीं हैं।
- पासी जाति के गोत्र धानुष (कठेरिया) के अलगाव एवं राजाओं की कहानी गजेटियरों की जुबानी।

शीघ्र प्रकाशित, ...

एक सर्वेक्षण

मूर्तियों में सिमटता समाज

✍के० के० रावत

सिकंदरबाग चौराहे पर १२.११.९८ को स्थापित वीरांगना उदादेवी पासी की प्रतिमा

राजा बिजली पासी, वीरांगना उदादेवी पासी, राजा गंगा बक्स रावत आदि अन्य पासी सरदारों एवं नायकों की मूर्तियों की स्थापना व स्थापना की माँग के लिए नया जोश व उमंग है। पासी समुदाय के लोग इन प्रतिमाओं को अपने गौरव और आत्म–स्वाभिमान से जुड़ा हुआ मुद्दा मानते हैं इसलिए इन प्रतिमाओं की स्थापना के लिए जगह–जगह से माँग उठ रही है। कहीं राजकीय व्यवस्था यह. माँग पूरी कर पा रही है कहीं नहीं। इन माँगों, संघर्षों एवं समारोहों में पासी राजाओं, नायकों और वीरांगनाओं के कर्म एवं संदेश से प्रेरणा कम और उतावलापन एवं व्यग्रता अधिक है। इस संबंध में वास्तविकता यह है कि आज पासी जागृति जिसे कुछ लोग जागरण की संज्ञा दे रहे हैं, केवल पासी नायकों की प्रतिमाओं की स्थापना अथवा स्थापित करने की माँग समारोह तक ही सीमित है। बिरले ही ऐसे अवसर आते हैं जब किन्हीं अन्य सामाजिक, आर्थिक या साहित्यिक मुद्दों पर पासी एकता प्रदर्शित होती है व संघर्ष का बिगुल बजता है।

सार्वजनिक स्थलों पर महापुरूषों की प्रतिमाएँ स्थापित करना हमारे देश की प्राचीनतम परम्परा है। देश के विभिन्न भागों, महानगरों, कस्बों–चौराहों पर अनेक राजा, महाराजाओं, वीरों, शहीदों, स्वतंत्रता सेनानियों, वीरांगनाओं की प्रतिमाएँ स्थापित है। ये प्रतिमाएँ केवल शोभा की वस्तु नहीं हैं बल्कि इन विभूतियों की वीरता, शौर्य, त्याग, समर्पण, बलिदान, सेवा तथा संघर्ष का प्रतीक तो है ही साथ ही समाज को भी इसी त्याग, सेवा, बलिदान, संघर्ष के पथ पर चलने की प्रेरणा देती है। केन्द्र, राज्य सरकार या स्थानीय स्वशासी संस्थाओं द्वारा पासी नायकों, वीरांगनाओं की जो प्रतिमाएँ जगह–जगह स्थापित की गई हैं या फिर स्थापित की जाने वाली हैं उनके पीछे उनकी उपर्युक्त मूलभावना– संघर्ष व संदेश को कम तथा व्यकितगत राजनैतिक व दलीय हिंतों का अधिक ध्यान रखा गया है। पासी समाज के नायकों–वीरांगनाओं की प्रतिमाओं व सांस्कृतिक धरोहरों को पासी वोट बैंक से जोड़ा गया हे। पासियों का वोट प्राप्त करने, उन्हें खुश करने और अपनी ओर आकर्षित करने का माध्यम बनाया गया है। आज ये प्रतिमाएँ पासी वोट बैंक के सहारे निर्विघ्न राज्य करने का शासकों का जरिया बनी हुई हैं। समता, बंधुता पर आधारित लोकतांत्रिक समाज की रचना का इनसे कोई संबंध नहीं रह गया है।

वर्तमान में समाज को मूर्तियों के नाम पर विभाजित करके दिगभ्रमित किया जा रहा है। हर राजनैतिक दल अपनी–अपनी राजनैतिक चालों से इस कार्य में पीछे नहीं है। समाजवादी पार्टी ने बिजली पासी किले के रख–रखाव कि लिए १५ लाख रूपये दिए और किले की भूमि हस्तांतरित करने का वादा। पैसा मिला पर जमीन नहीं मिली। पासी समुदाय के वोट बैंक को देखते–देखते सरकार चली गई। बसपा की सरकार ने किले की बाउन्ड्री बनाकर राजा बिजली पासी की मूर्ति स्थापित कर सौन्दर्यीकरण करवा दिया। पासियों का वोट बैंक सपा से निकल कर बसपा की ओर खिसका ही था कि सरकार गिर गई और संबंधित समाज किले की हटाई गई पुरानी व नई मूर्ति की बहस में झूलने लगा। भाजपा की सरकार आई उसने पासियों को रिझाने के लिए किले की भूमि का हस्तांतरण करने, वीरांगना उदादेवी पासी की आदमकद मूर्ति सिकंदरबाग, लखनऊ के चौराहे पर लगाने की घोषणा की। इसके पहले जनता दल के नेता माननीय श्री राम विलास पासवान ने भी एक मूर्ति लगवाने की घोषणा की थी। कहना गलत न होगा कि पासी समुदाय का चौमुखी विकास तो नहीं हुआ वरन् चौमुखी बँटवारा हो गया। इससे काम बनते न देखकर एक कदम और आगे बढ़े, राजनीतिज्ञों ने बने ट्रस्ट को भी दो तीन भागों में बँटवा दिया। माननीय मुलायम सिंह जी के समय में बने महाराजा बिजली पासी स्मारक एवं सांस्कृतिक ट्रस्ट को तोड़ने में कामयाब नहीं हुई थी तो सौन्दर्यीकरण के बहाने किले के प्रांगण से पुरानी मूर्तियों, शिलालेखों एवं साइनबोर्डो को हटवा कर, मण्डल और ट्रस्ट के बीच बहस का मुद्दा बना दिया। भाजपा ने पासियों का एक नया ट्रस्ट बनवाकर पुराने का अस्तित्व नकार दिया– पासियों पर जनता दल के प्रभाव को रोकने के लिए नगर मंत्री ने उदादेवी संस्थान के माध्यम से एक अलग ट्रस्ट बनवाकर अपने ही पूर्व सांसद को अध्यक्ष बनवाया। कोई भी दल इन स्थापित मूर्तियों के अनुरक्षण की चर्चा तक नहीं कर रहा है।

सिकंदरबाग चौराहे पर पासियों के भाजपाई ट्रस्ट के माध्यम से उदादेवी पासी की मूर्ति लग गई। चौराहा पासियों के नाम का हो गया। पर वास्तविकता क्या हुई? इस पर किसी का ध्यान नहीं गया। आज पासी समाज कितने गुटों में बँट गया। **पासी एकता की डोर का हर धागा अलग-अलग हो गया। आज यह समुदाय व उसका अधकचरा नेतृत्व यह नहीं तय कर पा रहा है कि उसकी असली प्राथमिकता क्या है ? समाज का विकास, निर्माण या एकता अथवा केवल उनकी मूर्तियों की स्थापना व जयंती, पूण्यतिथि पर कार्यक्रमों का आयोजन इत्यादि की माँग।**

विचारणीय मुद्दा यह है कि पासी आबादी शोषण, उत्पीड़न, अन्याय, सामाजिक भेदभाव व अस्पृश्यता का शिकार है। बेरोज़गार युवा शक्ति की लम्बी फ़ौज है। पासी बंधुआ–मज़दूरों, खेतिहर श्रमिकों, भूमिहीनों की संख्या भी कम नहीं है। आज भी भूख व बीमारी से इस समुदाय के बच्चे पीड़ित हैं। कितनी स्त्रियाँ गर्भावस्था व प्रसूति अवस्था में जी–तोड़ परिश्रम करने को मज़बूर हैं। यह स्थिति शहर से दूर ग्रामीण अंचलों में बड़ी आसानी से देखी जा सकती है। यही नहीं सामन्ती अत्याचार पासी माँ–बहनों की अस्मिता के साथ खुलेआम खिलवाड़ कर रहे हैं। वह इनकी

इज़्जत–आबरू को बेरहमी से कुचल रहे हैं। पासी नवयुवकों का इनकाउंटर आम बात है। महिलाओं के बलात्कार की घटनाओं का हाल समाचार–पत्रों में लगभग नित्य ही देखने को मिलता है। **यह सब इन्हीं मूर्तियों के ही तो वंशज हैं।** इन ज्वलंत समस्याओं पर कितना ध्यान दिया जा रहा है। **अधिक ध्यान में रखा गया है २२ जनपदों के वोट बैंक को जिसे मूर्तियों से जोड़ा गया है ना कि इनके सर्वांगणीय विकास की ओर। कोशिश यही है कि इनमें एकता न बने, इनका नेतृत्व न उभर सके, गुटबाजी बरकरार रहे। पासियों के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक एवं साहित्यिक विकास पर पानी फिरता रहे। और समुदाय मूर्तियों की राजनीति में झूलता रहे।**

महाराणा प्रताप, वीरवर लक्ष्मण, सुभाष चन्द्र बोस आदि ऐतिहासिक मूर्तियों की स्थापना को वोट बैंक नहीं बनाया जाता है उन्हें देश की ऐतिहासिक सांस्कृतिक धरोहर के रूप में प्रचारित एवं प्रस्तुत किया जाता है। राजा बिजली पासी, वीरांगना उदादेवी पासी, झलकारीबाई और डा० अम्बेदकर की मूर्तियों को अलग श्रेणी देकर वोट बैंक का राजनीतिक खेल क्यों खेला जाता है? नतीजा बिल्कुल सामने है कि आज पासी समुदाय मूर्तियों में सिमटता जा रहा है।

आवेश और उन्माद की बात यहाँ तक आ पहुँची है कि एक छुटभैये नेता ने बताया कि मैं उदादेवी की मूर्ति स्थापित कर अपने यहाँ एक मंदिर बनवा रहा हूँ। मैंने कहा बड़ी अच्छी बात है। उन्होंने कहा कि मेरा विचार यह है कि इसकी पूजा–अर्चना होने लगे। बात से यह पता लगा कि यह महाशय अपना वोट–बैंक तैयार कर पूजा और उपासना में कैद करके कुछ करने से छुट्टी पा लेना चाहते हैं । यह सब देखकर लगता है कि समाज मूर्तियों के नाम पर विपरीत चल पड़ा है। इन हालातों में समाज को राजनैतिक खेल के रहस्य से परिचित होना पड़ेगा। राजनैतिक पासी नेताओं की मानसिकता को समझना होगा। समाज की गुटबन्दी को समाप्त करके एकता की डोर में पिरोना होगा। पासी इतिहास को बता कर साहित्य सृजन करके नायकों/ वीरांगनाओं की मूर्तियाँ स्थापित करवानी होंगी। साथ–साथ राजनैतिक मायाजाल को तोड़ना भी होगा। पासी समुदाय में प्रतिमाओं के अतिरिक्त विद्या के मंदिरों की जरूरत है। **ज्ञान और विज्ञान के शिक्षकों की जरूरत है जो वास्तविक विकास का अर्थ समझाएँ।**

अखिल भारतीय पासी समाज ट्रस्ट

↓

महाराजा बिजली पासी स्मारक एवं सांस्कृतिक ट्रस्ट

↓

उदादेवी संस्थान समर्थित गुट → **महाराजा बिजली पासी एवं वीरांगना उदादेवी स्मारक ट्रस्ट**; **वीर शिरोमणि महाराजा बिजली पासी बहुउद्देशीय कल्याण ट्रस्ट**

उ० प्र० जाग्रत मंडल समर्थित गुट → **वीर शिरोमणि महाराजा बिजली पासी बहुउद्देशीय कल्याण ट्रस्ट**

सामाजिक प्रगाढ़ता के लिये पासी संस्थाओं में समन्वय की आवश्यकता

✍ खुशीराम पासी, स.अ. विद्युत
किदवईनगर वेस्ट, नई दिल्ली

पासियों की संगठनात्मक, संस्कृति और प्रगाढ़ता के विषय में विभिन्न संगठनों ने, सुधार हेतु अपने–२ तरीके से प्रचार–प्रसार किया है परन्तु आज तक कोई पासी जाति का ठोस इतिहास न बताया पाया है और न ही लिख पाया है। यह जटिल और कठिन विषय है जिस पर चर्चा करने की आवश्यकता है। समाज की उन्नति केवल उसके गौरवशाली इतिहास पर ही नहीं आधारित होती है उसकी उन्नति इस बात पर निर्भर करती है कि समाज के लोग कितने जागरूक हैं, संगठित हैं, शिक्षित हैं, बुराइयों और भ्राँतियों से दूर हैं? आज की राजनीति में कितने हिस्सेदार हैं? उसके युवक–युवतियाँ तथा बुज़ुर्ग कितने संयमी हैं? आपको मालूम है कि ४० वर्षो की आजादी के बाद भी हमारे समाज के लोगों की क्या दशा है? कितनी तरक्की की है जो गाँव में है वे कैसे अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं? नगर के लोगों की क्या दशा है? हम समाज की सेवा व सुधार के बारे में लम्बी–२, चौड़ी–२ बातें करते हैं। समाज के लोगों को सब्ज़बागों की सैर करवाते हैं। हम चार पढ़े–लिखे लोग एक मंच पर बैठ नहीं सकते हैं। एक मत के नहीं हो सकते हैं। दावा करते हैं कि झुग्गी–झोपड़ी में रहने वाले, गाँव में रहने वाले, मज़दूर वर्ग तथा अन्य कमजोर भाई–बहनों की सेवा करेंगे, उन्हें ऊपर उठाएंगे। क्या यह सब ऐसे हालातों में सम्भव है? समाज को ऊपर उठाने के लिये पहले बुद्धिजीवी वर्ग को एक होना पड़ेगा, एक मत तय करना होगा तभी अपने कमजोर भाइयों का उद्धार कर सकेंगे। हमारे बुद्धिजीवी भाई जो मंत्री, संत्री, डाक्टर, इंजिनियर, नेता, अभिनेता, लेखक, वकील हैं वह क्या सोचते हैं? कितना सहयोग सामाजिक संगठनों को दे सकते हैं यह शोचनीय विषय है। नेता सभी बनना चाहता हैं कोई वॉलेन्टियर क्यों नहीं बनना चाहता है? सेवा सभी करवाना चाहते हैं परन्तु आज सेवक बनने को कोई तैयार नहीं है। यही सब वजहें हैं जिनके कारण समाज का पहिया आगे नहीं बढ़ता है। सामाजिक संगठन बनते हैं और कुछ दिनों बाद मृत प्रायः हो जाते हैं।

आज पासी जाति की प्रगाढ़ता एवं इसकी विभिन्न संस्थाओं में समन्वय की आवश्यकता है। इस पर खुलकर चर्चा होनी चाहिये। देश में जहाँ–जहाँ पासी उत्थान के लिये सामाजिक संस्थायें हैं उनका आपस में तालमेल अवश्य होना चाहिये। सबका प्रोग्राम लगभग एक–सा होना चाहिये, आपसी पत्र–व्यवहार होना चाहिये, विचारों का आदान–प्रदान होना आवश्यक है, एक–दूसरे की समस्याओं को जानना तथा उनके निदान में सहयोग करना चाहिये। आज देश के प्रत्येक नगर में पासी संस्थायें मिलेंगी लेकिन सबका सुर अलग–अलग है। किसी भी स्तर पर किसी प्रकार का तालमेल नहीं है। पासी भाइयों की भलाई के लिये चाहे वह वकील, डाक्टर, मंत्री, एम.पी., एम.एल.ए., व्यापारी, सरकारी कर्मचारी, अधिकारी हो चाहे मजदूर वर्ग हो सबको एकजुट और एक झण्डे के नीचे खड़ा होना चाहिये। शादी–विवाह में बाल–विवाह और दहेज जैसी कुरीतियों से एकजुट हो कर दूर करवाना चाहिये। अगर सचमुच समाज में क्रांति लानी है तो एक नारा, एक झण्डा, एक नेता होना आवश्यक है। अतः मैं यही कहना चाहूंगा कि हमारे समाज की उन्नति और भलाई डा० अम्बेदकर के बताये हुए रास्तों शिक्षित बनों, संघर्ष करो और संगठित बनो के नियमों पर ही निर्भर है।

फैजाबाद

✍ हेमन्त कुमार रावत
सोहावल, फैजाबाद

अयोध्या, पुराणों में सूर्यवंशी राजाओं की राजधानी, इसके राज्य में श्रावस्ती थी जहाँ महात्मा गौतम बुद्ध ने कितने ही वर्ष बिताए। अयोध्या राज्य का कमोवेश अस्तित्व चौथी सदी में गुप्त काल तक रहा। गुप्त काल के बाद यह राज्य उजाड़ हो गया, पूरा राज्य जंगलों में परिवर्तित हो गया था। सातवीं सदी तक तो यह प्रदेश निर्जीव मरूस्थल के समान हो गया था, और इस राज्य पर यहाँ की मूल जातियों का पुनः प्रभुत्व हो गया था, जिसमें पासी व इसकी उपजाति भर पासी प्रमुख थी। नवीं शताब्दी में यह भाग कन्नौज राज्य का हिस्सा जाना जाने लगा। महमूद गज़नबी और मसूद गाज़ी के समय यहाँ पर पासियों का राज्य था। ११६४ में कुतुब्द्दीन ऐबक ने कन्नौज के हिन्दू राजा को हटा कर बुन्देल खण्ड को अपने प्रभुत्व में लिया तो वहाँ के भरों के साथ अन्य हिन्दू सरदारों ने अयोध्या आकर इसको अत्यंत शक्तिशाली बना दिया। पर विदेशी आक्रांताओं से बराबर युद्ध होता रहता था। कहने भर को ही यह शिर्की राज्य का एक भाग कहलाता था। शिर्की राज्य की राजधानी जौनपुर थी (*इम्पीरियल गजेटियर वाल्यूम I, पेज २२५–२२८*)। सन् १४१४ में जौनपुर के आखिरी शासक संगीत प्रेमी सुल्तान हुसैन शिर्की बने जिन्होंने १५ रागों की रचना की इनके रचित रागों में राग श्याम कदर, राग श्याम देश, राग तोड़ी और जौनपुरी राग प्रसिद्ध है। बाद को यह बड़े आगा के नाम से विख्यात हुए। सन् १५५५ में जौनपुर मुगल सल्तनत का हिस्सा बन गया था। मुगल बादशाह हुमायूँ ने सआदत ख़ाँ को अवध का सूबेदार नियुक्त किया था इसमें जौनपुर भी शामिल था। इसी समय से अवध में नवाबी राज्य की नींव पड़ी थी।

जब नवाब सआदत खाँ बुरहानुल्मुल्क अमीनुद्दौला निशापुरी दिल्ली की तरफ से सूबेदार अवध मुकरर हो कर आए तो इस भाग के आदिवासियों यानी पासियों, और शेख़ ज़ादाओं को हरा कर अयोध्या (कौशल देश की राजधानी) पहुँचे और आबादी के पहले ही एक ऊँची पहाड़ी पर अपना डेरा जमाया, जहाँ से सरयू नदी (घाघरा नदी) के दाहिने किनारे को पूरी तरह से नियंत्रित किया जा सकता था। प्रशासनिक आवश्यकताओं के कारण किसी प्रकार का निर्माण कार्य नहीं किया था, क्योंकि यह तड़क भड़क से दूर सादगी पसंद व्यक्ति थे। वर्षा से बचने के लिए अपने डेरे के ऊपर छप्पर तथा चारों ओर मिट्टी की दीवारें बनाई गईं थीं यही नहीं चारों कोनों पर एक–एक मीनार भी तामीर करवाई थी। दीवारों के बीच का घेरा काफी बड़ा था जिसमें पैदल सैनिक, घुड़सवार, हथियारों का कारखाना आदि सभी उसी के अन्दर थे। बुरहानुल्मुल्क बड़े महलों को बनवाने के इच्छुक नहीं थे। अन्दर ही औरतों के लिए मिट्टी के छोटे–छोटे घर बनवाए गए थे। इस छप्पर के

अस्थाई निवास को **'बंगला'** के नाम से पुकारने लगे थे। फैज नामक एक व्यक्ति था जिसने अपनी बुद्धि का प्रयोग कर के इसको उस समय की आवश्यकतानुसार बनवाया था, फैज ही उस बंगले का वास्तुकार था। जिसके नाम पर आबाद बस्ती को **फैज़+आबादी** के नाम से जाना जाने लगा। बाद में यह फैज आबादी **फैज़ाबाद** के नाम से प्रसिद्ध हुई और अवध की प्रथम् राजधानी कायम हुई।

अवध के शाही निशान के बारे में भी यह पता चला है कि जब बुरहानुल मुल्क अवध सूबे के सूबेदार मुकर्रर हो कर आ रहे थे तो गंगा नदी पार करते हुए इनकी नाव में एक मछली तड़प कर आ गिरी थी। उस समय अवध का सूबा शेखों के कब्जे में था जो बड़े ही भयंकर और लड़ाकू माने जाते थे। बुरहानुल मुल्क ने अपने तेज़ दिमाग और बड़े ही सुलझे तरीके से बिना एक कतरा खून का गिराए उन शेखों के अधिकार से सूबे को निकाल कर अपना अधिपत्य जमा लिया था और फैजाबाद की ओर रवाना हुए थे। इस सफलता का शगुन बुरहानुल मुल्क ने उस नाव पर गिरी मछली को माना। इसी की वजह से इन्होंने मछली को अवध सूबे का शाही निशान बनाया था जो आज भी है। यह जानकारी श्री तस्सुस ऐजाजी मजहरे आलम लाइब्रेरी, १२, नादान महल रोड, लखनऊ ने देते हुए यह भी बताया कि आज भी पुराने अवधी घरानों में नेक शगुन में मछलियाँ शगुन के रूप में भेजी जाती हैं। ऐजाजी साहब सन् १९४८ से इतिहास और उर्दू अदब में लिख रहे हैं और इनकी शख़्सियत के बारे में "लन्दन टाइम्स", "टाइम्स ऑफ इन्डिया" सहित कई पत्रिकाओं में काफी कुछ लिखा गया है। यह अवध की तारीख के बारे में काफी प्रमाणिक जानकारी रखते हैं। कई इतिहास के शोधार्थियों को गाइड भी कर चुके हैं इनकी कई पुस्तकें उर्दू आदि में छप चुकी हैं। आज भी उत्तर प्रदेश शासन की प्रतीक दो मछलियाँ हैं।

समाजवाद सामने आ रहा है। शूद्र - शूद्र रूप में भविष्य में शासक होंगे, अतएव इन हिन्दू कहलाने वाली जातियों को अपने को सुधार लेना चाहिये ताकि वह अपने को उनका कृतज्ञ समझने लगे। अन्यथा जब वह जाग्रत होंगे तो अपने मुंह की एक फूँक से तुम्हें उड़ा देंगे।

-- स्वामी विवेकानन्द

(द्वारा बलवंत राय, एम.ए., एलएल.बी.)

गजेटियरों से

पंचशीलों का पांचाल

रूहेलखण्ड – बुद्धमऊ (बदायूं), कम्पिल जिसे कोट काम्पिला या शंकसा (जिला फर्रूख़ाबाद) कान्यकुब्ज़ (कन्नौज) और कामिनी तथा अहिक्षत्र (रामनगर) में नागवंशीय राजाओं के आग्रह पर तथागत् भगवान बुद्ध ने आ कर सात दिनों तक धम्म देशना (प्रवचन) दी थी। उसी समय से यहाँ की नाग जनता बुद्ध के पंचशीलों से प्रभावित होकर उनका पूरी तरह से पालन करने लगी थी। भगवान बुद्ध के पाँचों शीलों को पालन करने वाला यह भाग **पांचाल प्रदेश** कहलाया। यह पाँच शील क्या हैं?

पाली भाषा में –

1. **पाणाति पाता वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।**
2. **आदिन्ना दाना वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।**
3. **कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।**
4. **मूसावादा वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।**
5. **सुरामेरय मज्ज पमादट्ठानं वेरमणी सिक्खापदं समादियामि।**

हिन्दी में –

1. प्राणी हिंसा न करने की शिक्षा।
2. बिना दी हुई चीज ग्रहण न करने की शिक्षा।
3. दुर्व्यसनों से दूर रहने की शिक्षा।
4. झूठ न बोलने की शिक्षा।
5. नशीले पदार्थों का सेवन न करने की शिक्षा ग्रहण करना।

डा० वी. ए. स्मिथ के अनुसार इसी कुरू पांचाल में नाग राजाओं ने परीक्षित को, जनमेजय ने नागों को परास्त कर पूरा अधिकार किया था और परिचक्रा (अहिक्षत्र) की समुन्नत बौद्ध कला और संस्कृति को समाप्त करने के लिए बौद्ध मठों को तोड़ डाला था। अहिछत्र (रामनगर) के तीन हजार बौद्ध–भिक्षुओं को तितर–बितर किया था।

-- ***आर.के. सरोज*** एम.ए., एलएल.बी.

उपाध्यक्ष, पी०एस०३

हमारे पुरखे

परम पराक्रमी सौदीन उर्फ शिवदीन

श्रीमती शान्ति देवी
आलमबाग, लखनऊ

मेरे परदादा स्व० सौदीन उर्फ शिवदीन पासी, लखनऊ जनपद की मोहनलालगंज तहसील के ग्राम मोहारी मजरे सलाही खेड़ा के निवासी थे। सलाही खेड़ा में बसने से पूर्व वह इसी तहसील के गाँव सलामपुर में पैदा हुए और वहाँ से वह गाँव मीसा में आ गए, फिर कुछ कारणों से मीसा भी छोड़ कर सलाही खेड़ा मजरा मुहारी खुर्द में निवास कायम किया। इनके दो पुत्र स्व० मर्दन और रूप चन्द्र थे। मर्दन के चार पुत्र स्व० मास्टर छत्रपति, यशकरन, सूर्यबली व सालीग्राम तथा तीन पुत्रियाँ सुखदेई, अन्नपूर्णा और राजकुमारी थीं। राजकुमारी का विवाह ग्राम न्योछना जनपद बाराबंकी, निवासी बाबू बजरंग बिहारी जमींदार और भूतपूर्व विधायक के साथ हुआ था। इनके पुत्र सर्वश्री कृष्णा कान्त रावत, इन्द्र कान्त रावत व पुत्री शकुन्तला, मिथलेश कुमार रावत, डा० राजेन्द्र कुमार रावत और अमरसेन रावत हैं। मास्टर छत्रपति गूजर हरिजन वेलफेयर सुपरवाइज़र के पद पर कार्यरत् थे और अपने जीवन के अंतिम समय तक अनुसूचित जातियों की सेवा करते रहे। मैं इन्हीं की चार संतानों में बड़ी पुत्री हूँ मेरा पाणिग्रहण संस्कार ग्राम सरवनी, त० किराकत, जिला जौनपुर निवासी श्री बलवंत राय से हुआ जो बाद में पी०सी०एस० अधिकारी बने और संयुक्त सचिव उत्तर प्रदेश शासन से निवृत हो सामाजिक कार्यो में लगे हुए हैं। इस प्रकार मैं अपने पितामह परम साहसी शिवदीन के वंशज और उनकी गौरवमयी स्मृति संजोय हुए हूँ। मेरे पितामह की वीरोचित घटनाओं एवं स्वाधीनता संग्राम के योगदानों की याद आज भी मानस पटल पर अंकित है। उन्हीं के कुछ साहसिक कार्यो का विवरण प्रस्तुत क़र रही हूँ।

शिवदीन गूजर पासी का जन्म १८३० ई० के लगभग हुआ था और वह लगभग १०० वर्ष तक जीवित रहे। उनके ज्येष्ठ पुत्र मर्दन लगभग १८७० ई० में पैदा हुए थे और १९६३ में स्वर्गवासी हुए। मेरे बाबा प्रायः अपने पूज्य पिता के विषय में हम लोगों को बताया करते थे। उनके शौर्य और साहस की गाथाएँ भी सुनाया करते थे। मेरे बचपन की यादों में अपने परबाबा का श्वेत लम्बी दाढ़ी और मूछों का चेहरा मेरे मस्तिष्क में आज भी मौजूद है। शिवदीन रायबरेली के स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी राणा बेनीमाधव के सहयोगी थे जिनसे मिलने वह घोड़ी पर सवार होकर जाया करते थे। मेरे परबाबा राणा के विश्वास पात्रों में से थे। बीरा पासी से भी उनका संबंध था। मेरे बाबा बताते थे कि मेरे पर बाबा को एक बार राणा बेनी माधव से यह जानकारी मिली कि नवाब वाजिद अली शाह के

जमाने में लखनऊ नगर की एक वेश्या ने उनका (राणा) अपमान कर दिया था। शिवदीन को यह बात बड़ी ही नागवार लगी वह अपने साथियों के साथ रात्रि के अंधेरे में उस वेश्या को उसके कोठे से सोते में चारपाई समेत उतार कर रातों रात राणा बेनी माधव के कैम्प पर हाजिर कर दिया। सबसे बड़ी तारीफ की बात यह थी कि राह में उस वेश्या की नींद नहीं उचटी। राणा भौंचक्के रह गए और बोले "शिवदीन तूने यह क्या किया ?" वेश्या की भी एक अस्मिता होती है उसके साथ जोर–जबरदस्ती ठीक नहीं। जग गई वेश्या ने राणा से अपनी पूर्व धृष्टता के लिए माफी मांगी। राणा ने उसे माफ करते हुए शिवदीन से कहा कि इसको सकुशल और ससम्मान उसके कोठे पर पहुँचा दो। शिवदीन ने आज्ञा का पालन किया। सम्भवतः इसी घटना और कुछ अन्य कारणों से अवध के नवाब वाजिद अली शाह ने राणा बेनी माधव को रायबरेली के किले में उनके कुछ पासी साथियों के साथ कैद कर लिया। राजा की कैद से मुक्त करने के लिए शिवदीन पासी (जो कैद नहीं हो पाए थे) ने रात्रि में किले की दीवार में गजर के बजने पर कीलें ठोंक–ठोंक कर उनके सहारे चढ़, उन्हें रस्सी के सहारे दीवार को फँदाने के लिए प्रयत्न किया तो वहाँ रस्सी छोटी पड़ गई थी। तो उन्होंने अपनी धोती खोल कर रस्सी में बाँध कर राणा को दीवार पर खींच बाहर निकाल लिया। इस प्रकार राणा को मुक्त कर लिया। जब नवाब को शिवदीन पासी के चातुर्य की खबर लगी तो उन्होंने उसे "चालाक चोर" कहा। जबकि शिवदीन चोर नहीं थे बल्कि एक साहसी दृढ़ प्रतज्ञ, स्वंत्रता प्रेमी, स्वच्छंद प्रकृति के स्वामी–भक्त व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी मित्रता / स्वामी–भक्ति का एक अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया था।

विश्वविख्यात साहित्यकार अमृतलाल नागर ने अपनी अनूठी कृति "गदर के फूल" में राणा बेनी माधव को जेल से निकालने की घटना का उल्लेख किया है। वृद्धावस्था में शिवदीन की घोड़े पर सवार, सिर पर पगड़ी, मुख पर श्वेत लम्बी दाढ़ी और मूँछ समेत साक्षात आकृति देखते ही बनती थी। यह अनपढ़ थे पर कढ़े अधिक थे। उन्होंने राणा बेनी माधव के अंगरक्षक के रूप में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में बड़ा ही योगदान दिया था। अंग्रेज सरकार ने क्रांति के पश्चात इनके ऊपर जरायम पेशा कानून लागू कर हिस्ट्रीशीटर बनाकर उनके पीछे पड़ी रही परन्तु उन्हें गिरफ्तार न कर सकी। मरते समय उन्होंने अपने दोनों पुत्रों को कसम दिलाया कि वे जीवन पर्यन्त चोरी और डकैती की तरफ मुखातिब नहीं होंगे चाहे उन्हें कितनी ही गरीबी का जीवन बिताना पड़े। हमारे पुरखे परबाबा शिवदीन पासी जाति के लिए प्रेरणा के श्रोत हैं।

Our religion is in kitchen. Our God is in the cooking pot, and our religion is "Don't touch me, I am holy". If this goes on for another century, everyone of us will be in a lunatic asylum.

— Swami Vivekananda

An Overview

PASI RAJA GANGA BUX RAWAT

(Extract from Contemporary Books)

✍ K. K. Rawat

Dariyabad V/s Barabanki

The early history of Barabanki is perhaps more obscure than that of any other district in Avadh, as there are no substantial historical records or antiquarian materials available however, some mounds here and there lend colour to the belief that the place was originally ruled by the Bhar Pasis. It is also claimed that in the 9th century AD the district was a part of the kingdom of Kannauj. This is corroborated by the finds of several coins of Bhoj Deva who reigned there in 802 AD.
Saiyad Solar Masud Gazi invaded the place in 1020 AD and made Satrikh his H.q. Masud Gazi defeated by Bhar Pasi Raja Suhel dev. in Bahraich.

Regarding Dariyabad.

SEAL OF QAZI AKRAM 1142 AH ks Date - 14 the Rajab, 12th year of the reign, 1142 A.H. (January 22, 1730 A.D.)

Parwana under the seal of Burhanul - Mulk Sahadat Khan. Muhammad Baqar Beg should note that one thousand eight hundred and ninety six bighas of land were granted to Faizullah and others the Aima Dars of quabah Dariyabad and Sarai Shah Alam as madad-i-miash. Abdul Khair heir of Faizullah and others has now applied for the renewal of the grant in his name. It is, therefore, ordered that necessary papers should be prepared on the basis of the Farman and handed over with possession of land to the applicants.

The above mentioned officer is directed not to cause any hindrance to the grantees who should be permitted to enjoy proceeds of the grant.

The whole lot of offenders were the Pasi of Kasim Ganj in Dewa and the Behelieas as of Surajpur. The Central Government was two week to cope with this situation effectively. These chief had their mud forts hidden in the jungles from where they raided the neighboring villages and made good their escape on the arrival of the Government forces. The most turbulent taulqdar and bandit chief was Pasi Raja Gur Bux* of Bhitauli estate. His possession of the estate Ramnagar Dhumariya as a local governor of public officer made his position more influential and he was entrusted with the collection of the revenue and the management of the police. He picked up a quarrel with the Government officials on the question of the rate of payment of revenue. He kept a large body of armed followers and was too strong for the Government, which was obliged to enter into a compromise and the revenue rate was reduced. Sir W.H. Sleeman KCB (Resident at the Court of Lucknow) entered the estate of Ramnagar Dhumariya held by Raja Gurbux. On Feb. 21st 1850 during his tour

* परिपूर्णानन्द वर्म्मा– वाजिद अली शाह का राज और उसका अन्त, पृ० १८०–८३

through oude. Sleeman write in his dairy - "There are also in these parts a member of pansee (Pasis) bowman, who not only join the enterprise of such gangs as in other districts but form gangs of their own under leader of their own castes."

*The Jungles of Dariyabad / Bara Banki District in 1838**

1. SOORUJPUR BEHREYLA JUNGLE : East from Lucknow forty miles, on the bank of the Kalyanee river, sixteen miles long and four miles broad - Square miles, sixty four.

   Chundee has a fort in this jungle, and the family have been robbers for several generations. The widow of the late notorious robber, Rajah Singhjoo the head of the family was a stronger one.

2. GUNESHPORE JUNGLE, sixty miles south-east from Lucknow on the bank of the Ghaghra river, six miles long and two miles broad-twelve square miles.

   Maheput Sing, an atrocious robber, holds his fort of Bhowaneegur in this jungle.

3. IN THE DEWA JEHANGEERABAD : The kasimgunge and Bhetae Jungle, eighteen miles north-east from Lucknow. sixteen miles long, and four miles wide-square miles, sixty-four, on the bank of the little river Reyt.

   Ganga Bux Rawat holds the forts of Kasimgunge and Atursae in this jungle. Thakur Purshad Rawat those of Bhetae and Buldeogur; and Bhugwunt Sing Rawat that of Munmutpore. Other members of the same family hold those of Ramgura Paharpore. Ganga Bux Rawat was stronger one of this familty.

IN THE HYDERGUR

4. THE KOLEE JUNGLE, fifty miles south-east from Lucknow, on the bank of the Goomtee river, three miles long and one and a half wide - square miles, four and a half.

5. KURSEEA KURAEA JUNGLE, south-east from Lucknow fifty miles on the bank of the Goomtee river, three miles long and one mile widesquare miles three.

Family of Khumma Rawat

Ganga Bux of Kasimgunge has his fort in this belt of jungle, and he and his friends and relations take good care that no man cuts any of its down, or cultivates the land. **Khumma Rawat of the Pasi tribe****, the great grand father of Ganga Bux got possession of five or six villages out of the estate of Kazee Mohammed after his death. When Khumma died he left them to his five sons 1. Kundee Singh Rawat, 2. Bukhta Singh Rawat, 3. Alam Singh Rawat, 4. Lal Sahae Rawat, 5. Misree Singh Rawat (Col. Sleeman added title 'Singh' after the name of sons of Khumma Rawat for creating confusion among the public).

* As per *Sleeman Diary, Page No. 284-85;* **Sir W. H. Sleeman K.C.B. - *A Journey Through Kingdom of Oude Vol. 2, Page No. 232-34,* G. D. Bahtnagar- *Awadh Under Wazid Ali Shah, Page No. 56-57*

As the family increased in numbers it has gone on adding to its possessions. Each branch of the family, as it separates from the parent stock, builds for itself a fort in one or other of the villages which belong to its share of the acquired lands. In Kasimgunge fort the head of each branch of the family resides with his armed followers. **In small enterprises** each branch acts by itself in larger ones two or more branches units and divide the lands they acquire by amicable arrangement. The whole of this family, descendants of Khumma Rawat **hold no less than two hundred villages and hamlets** all taken from the old proprietors with the acquiescence or connivance of the local authorities, who were too weak or too corrupt.

Pedigree of Khumma Rawat is as below :

Kundee Rawat had two sons : 1. Cheytan and 2. Ajeet Singh Rawat. Cheytn had two sons, 1. Sophul Rawat, 2. Thakur Purshad Rawat. Sophul had two sons, 1. Keerut, 2. Jote Rawat. Ajeet had two sons; 1. Bhugwant 2. Rutun, Thakur Prasad, Bhagwant and Rutun reside in a fort which they have built in Bhetae four miles from Dewa, in the north west border of the belt of jungle. They hold forty villages besides hamlets, which they have taken from the Dewa and Kursee estate. Thakur Prasad has another fort called Buldeogur near that of Atursae two coss (four mile) south of Dewa; and Bhugwant has small fort of Munmutpore close to Bhetae. Bukhta Rawat had only one son Ganga Bisram who had only one son Ganga Bux Rawat, who had two son Munoo Rawat and Ranjeet Singh Rawat, built the fort of Kasimgunge on the north eastern border of the same belt of jungle, two miles south of Dewa, and on the death of his father, he went to reside in it with his family and armed followers. He holds 27 fine villages with hamlets. He has also a fort called Atursae two coss (4 miles) south from Dewa, a mile west from Buldeogur. Alum Rawat's descendants have remained peaceable cultivators of the soil in Dewa.

Lalshahae Rawat had thee sons : 1. Dheer Rawat. 2. Bustee Rawat 3. Gokul Rawat all dead. Dheer Rawat had two sons Omed Rawat and Jowahar Rawat, Omed Rawat had three sons Dirgpaul Rawat, Mahepút Rawat and Gungadhar Rawat who was murdered by Thakur Persad, his cousin. Jowahar Rawat had one son Priteepaul Singh Rawat. Bustee Singh Rawat had two sons Girwur Singh Rawat and Soulee Rawat. Girwur Singh Rawat had two sons Dhokul singh Rawat and Sunker Singh Rawat. This branch of the family holds the forts of Ranegura and Paharpore on the border of jungle six miles south west from Dewa and twelve villages besides hamlets taken from the old proprietors. Gokul Singh Rawat had two sons Dulloo Rawat and Soophul Rawat. Dulloo Rawat has one son. They reside with the families of Dheer Singh Rawat and Bustee Singh Rawat.

Misree singh Rawat the fifth son of khumma Rawat had three sons 1. Bonead Singh Rawat 2. Dureeao Singh Rawat 3. name forgotten —all three are dead. Bonead Singh Rawat had two sons 1. Anoop Rawat 2. GoorBux Rawat. Dureeao Singh Rawat had two sons 1. Anokee 2. Name forgotten. The third son of Misree singh Rawat had three sons 1. Mulung Rawat. 2. Anunt Rawat 3. forgotten all three are still alive. This branch of family reside Satarpore one mile west from Kasimgunge in this belt of jungle and two miles from

Dewa, in a fortified house built by them. They have got a small fort, called Pouree. This family of Pasi or as they call themselves, Rawat, in Oude and one of the most difficult to put down from their union. They can always at short notice collect bands of hundreds of the same tribe.

PEDIGREE OF KHUMMA RAWAT

(As per A Journey through Oudh Kingdom Vol. I & II by W. H. Sleeman, Resident of Oudh)

KHUMMA RAWAT

- **Kundee Rawat**
- **Bukta Rawat**
- **Alum Rawat**
- **Lalshahae Rawat**
- **Mishree Rawat**

Kundee Rawat

- *Ajeet Rawat*
  - Bhagwati Rawat
  - Runtun Rawat
- *Cheyten Rawat*
  - Sophal Rawat
    - Keerut Rawat
    - Jote Rawat
  - Thakur Pd. Rawat
    - Priteepaul Singh Rawat

Bukta Rawat

- *Bisram Rawat*
  - Ganga Bux Rawat
    - Munoo Rawat
    - Ranjeet Kumar Rawat

Lalshahae Rawat

- *Dheer Rawat*
  - Omed Rawat
    - Gangadhar Rawat
    - Mahipat Rawat
    - Drigpal Rawat
  - Jawahar Rawat
- *Bastee Rawat*
  - Girwar Rawat
    - Dokul Singh Rawat
    - Sunker Singh Rawat
  - Saulee Rawat
- *Gokul Rawat*
  - Dulloo Rawat
  - Soophal Rawat

Mishree Rawat

- *Bonead Singh Rawat*
  - Anoop Rawat
  - Gurbux Rawat
- *Durrao Rawat*
  - Anokee Rawat
  - Name Forgotten
- *Name Forgotten*
  - Mulung Rawat
  - Anant Rawat
  - Unknown

Ganga Bux Rawat and Amil Darshan Singh

On the 25th of Feb 1838, Rajah Dursun Singh, then in charge of the district, wrote to the Durbar of Wajid Ali Shah to say "that Ganga Bux of Dewa was the worst rebellian in the district would pay no revenue, and instigated others to withhold theirs; that numerous complaints had been made against him to the Durbar by the people, and that he had been urged by Government to do his best to punish him; that he had long tried all he could do so, but had not sufficient troops; that his evil deeds increased, however, so much that he at last determined to run all risks, and on the 27th of that month, on Friday, he left AmaneeGunge, and marched forty-eight miles without resting; and on Saturday, before daybreak reached **the fort of Kasimgunge, and invested it on all sides; that he found the fort large and strong, and surrounded with dense jungle**; that he had only three guns with him, but, as the enemy were taken by surprise he took all their outworks one after another; that the besieged got a crowd of their adherents to attack his forces in the rear on Saturday night, that they might get off in the confusion, but his troops were ready to intercept them at all points and, in attempting to cut his way through, GangaBux was seized with all his followers, but the women and children were permitted to go their way; that a good many of the enemy had been killed, and he Dursun SIngh had had one golundaz and five sipahees killed and ten persons wounded."

W.H. SLEEMAN - JOURNEY THROUGH THE KINGDOM OF OUDE IN 1849-1850. VOL-II PAGE 237 AND 238.

The King sent Dursun Singh a dress of honour with the title of Rajah on the 3rd of March 1838, **and ordered him to have the fort levelled with the ground. Dursun Singh, in reply states that he had men employed in pulling down the fort; and, in reply to an order to send in a list of the property taken from the besieged he states on the 12th of March, 1838, that none whatever had been secured. Ganga Bux soon bribed his way out of prison at Lucknow, returned to Kasimgunge, rebuilt his fort, and made it stronger than ever; and continued to increase his landed possessions by the murder of the old proprietors. He became enlisted into the tribe of Rajpoots, and his sister was married to the Powar Rajah of Etonda, seven coss north from Lucknow. Jode Singh, the present Rajah of that place, is her son; and he is associated with Ganga Bux in his depredations. Sahuj Ram of Pookhura, of the Ametheea tribe of Rajpoots, in the Hydergurh purgunna, on the right bank of the Goomtee river, married a daughter of Ganga Buyksh's and has a strong fort, called Raunee, thirty miles east from Lucknow.** The descendants of Khumma, the village watchman, have already built ten forts upon the lands which they have seized, and there are no less than seventy of these forts or **strongholds within a circuit of ninety miles round Bhetae and Khasimgunge**, the centre being not more than eighteen miles from the Lucknow cantonments.

Colonel Sleeman and Ganga Bux

Colonel Sleeman was the emissary of a foregone conclusion. He was appointed resident of Oudh in 1849 to inspect and make a false report, but the character of his report was determined for him before he entered Oudh. Colonel Sleeman's qualifications, was an able and jealous officer. More than forty years of his life had been spent in our Indian services. Major Robert Wilberforce Bird was Assistant Resident under Colonel Sleeman. He wrote his "pamphlet" to establish a case for 'Wajid Ali Shah". His statement that "Sleeman was an instrument in the hands of Dalhousie, to carry out his purpose of annexing Oude to British India was hasty and erroneous. However, he was honest enough to correct himself in a lecture delivered by him at Southampton on 16th Feb. 1858. (Dacoitee in Excelsis opcit P 122-Major R.W. Bird). Colonel Sleeman was determined to carry out his plans and so he went out on a regular tour on December 1, 1949. **The king had not permitted him but Sleeman ignored him altogether.**

"But the crowning effort of the Colonel was the tour which he made throughout the Oude dominions in the cold season of 1850. The Oude Government opposed this proceeding, and even the British Government forbade it, except with the King's sanction . Notwithstanding this, the Resident determined to carry out his plans, and represented to His Majesty that he was going out to a small place about five miles off called Chinahut, and a short way on. The king regretted the resident was troubling himself, but still no sanction was given, yet Colonel Sleeman upon this make a tour through the Kingdom."

(Sncucl Lucas - The spoliation of Oude by The East India Company P-95 printed in London 1857).

It was on this tour that some person made a complaint against the man already mentioned in the case of Wusee Ully, viz. Ganga Bux, of Kassimgunge and Battaiee, on which complaint Col. Sleeman, after his return from the district, sent out two guns, two companies of the 10th N.I., the Oude Local infantry, and some of the King's corps, to surround the fort. Vain were His Majesty's requests that the Resident would abstain from this active interference and use of troops. Vain were the offers of the holders of the fort to come in, if a proper guarantee of a fair inquiry was given. An attack was commenced without any preconcerted plan. The men of the fort ware fired on by a young officer of the 10th N.I. , who forced open the outer gate, and introduced one of the guns, and the occupiers of the fort, driven to the last extremity, attacked and killed Lieutenant Ellerton, and killed and wounded some twenty-four or twenty-five sepoys, and fled during the night to the jungles. They were in due course pursued; and one morning early, Captain Orr, commanding the O.L. Police Corps, came upon some persons in a small tope or wood, attacked them, and killed twenty-two persons, amongst whom were two women. These were unfortunate villagers belonging to that district who had sought refuge on the arrival of the military force in the jungles and wilds, and who were not personally concerned in the fight at the fort. It has sought to be shown in vindication, that some of the party were servants of Ganga Bux; but this was not really the case. The district in which this tragedy

was performed was much injured and almost the whole of its revenue lost. But what was the accusation ? **It was stated to the Resident that Ganga Bux was a dacoit, and had killed a man; the fact being, that a border affray had taken place seventeen years previously, in which one of the opposite party had been killed.**

(Samuel Lucas- *The Spoilation of Oude by east India Company,* originally printed in London in 1857, Page No. 96)

"The Resident of the Awadh Government to announce a reward for the arrest of Ganga Bux who had escaped from Qasimgunj Fort. Wasi Ali Khan, who was the Assistant Secretary of the Chief Minister and ahd been dismissed by the orders of the Resident persuaded Ganga Bux to surrender. Relying on his word Ganga Bux surrendered with his son Ranjit Singh." (G. D. Bhatnagar- *Awadh Under Wajid ali Shah*, Page No. 64)

In fact Ganga Bux Rawat had not surrendered himself, but he had come to meet Wajid Ali Shah with his son as Wasi Ali Khan had taken oath of Holy Kuran stating that there would be no harm in meeting Wajid Ali Shah. Wasi Ali Khan had informed the movement of Ganga Bux to Col. Sleeman. On the bank of a stream near Chawk, Ganga Bux and his son were surrounded by a huge number of British soldiers. "Ganga Bux and his son Ranjit Singh (Bux) were beheaded by the orders of the Resident Col. Sleeman on the 18th September, 1850 in Lucknow. The stream which is now called *SARKATA NALA* from that day." (Vide Oude; Its Princes and Its Government Vindicated, Page No. 84) .

"आज"

(1)

राष्ट्र की जनता को आजादी
लगती नहीं हुई हासिल,
गिने-चुने संभ्रान्त लोग ही
इसका स्वाद जानते आज।

(2)

चोर बाजारी और दलाली
छायी है बाजारों में,
नित्य भाव चीजों के बढ़ते
दिन मुश्किल आने वाले,
काम जहाँ जनता का होता
सुविधा-शुल्क लगाते आज।

(3)

लम्बित न्याय प्रणाली में
न्याय हो गया दुर्लभ आज
शासन और प्रशासन में
लेन - देन की चर्चा आज।

(4)

मारा मारी छीन झपटें
झेल रही है जनता आज
घपलों के बाजारों में,
घूम रहे नेतागण आज
नाव फँसी मजधार बीच में
बेहाल दिख रहे बैठे आज।

सुरेश चन्द्र रावत, बी.एससी., ए-६२३/३, इन्दिरा नगर, लखनऊ

पाती मिली

सामाजिक इतिहास एक आवश्यकता

D- 27-10-1991

सुन्दर वाचनालय गुलज़ार बैठक
नीचे धुलपेट, हैदराबाद–६ (आन्ध्र प्रदेश)

सेवा में,

माननीय के० के० रावत जी !

संस्कार मानव मात्र के प्रतीक हैं। भारतवर्ष ही नहीं, अपितु सारे संसार में मानव जाति में संस्कार विद्यमान रहते हैं। ये संस्कार ही मानव जाति के मूल तक जाने में सहायता करते हैं। अतः जाति संस्कार के द्वारा ही किसी भी जाति समाज के इतिहास का निर्माण होता है। और यही इतिहास जाति का, समाज का और देश का प्रतिनिधित्व करता है। एक प्रकार से इतिहास समाज का दर्पण है।

दुर्भाग्य से जिस जाति का इतिहास न हो, वह जाति अंधकारमय हो जाती है। हर जाति को अपनी जाति से प्रेम रहता है। वह निज जाति के संस्कारों सें सदा प्रेरित रहता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक ज़ीवन के अनेकों कार्यकलापों में स्वयं की जाति का पूर्ण सहयोग रहता है। अतः मनुष्य को स्वयं की जाति से लगाव रहना स्वाभाविक है।

हमारी पासी जाति भारत में बसने वाली मूल जातियों में से एक है। पासी जाति की कुछ सामग्रियों से मालूम होता है कि पासी जाति एक वीर, जुझारू, साहसिक एवं निःस्वार्थ जाति है। आदिकाल से उन्होंने अपने स्वाभिमान के लिये हमेशा सीना ताने संघर्ष किया है। वह सदा निःस्वार्थ भावना से अपनी, अपने समाज की और अपने देश की रक्षा करते रहे। रक्षा करते समय उन्होंने कभी भी अपने या आने वाली पीढ़ियों के लिये कुछ भी ध्यान नहीं दिया। या यूँ कहिये कि खुद के मुँह से स्वयं की कहानी (बातें) आडम्बर समझते थे। इसीलिये उन्होंने अपनी पासी जाति के इतिहास की कुछ भी सामग्री जुटा नहीं पाये। अतः वर्तमान समय में हम पासी जाति के इतिहास की जानकारी की आवश्यकता अनुभव कर रहे हैं। यदा कदा, छिट–पुट जानकारी कुछ पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से हमें मिलती रही है। परन्तु एकत्रित सामग्री कहीं पर भी उपलब्ध नहीं है।

हमारी जाति का इतिहास न होने से हमारी सामाजिक व्यवस्था रूढ़ी रूप से निभाई जाती रही है। इससे होने वाले लाभ या दोष पर विचार ही नहीं किया गया है। ऐसे समाज को सही दिशा मिल पाना तथा उन्नति की ओर अग्रसर होना मुश्किल है। इसीलिये पासी जाति का इतिहास अत्यंत जरूरी है।

पासी समाज को विवाह आदि संबंध छोड़ कर अन्य आचरण समाजों से परस्पर समन्वय स्थापित करना चाहिये। समन्वय प्राकृतिक नियम है। समन्वय से समानता बढ़ती है तथा उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है। कोई भी व्यक्ति, समाज एवं देश स्वयं में अकेला रह कर उन्नति नहीं कर सकता। उनको अन्य संस्थानों, समाजों और देशों से परस्पर संबंध जोड़ने ही पड़ते हैं। एक–दूसरे का समन्वय समय और परिस्थितियों के अनुसार ही होता है। अतः वर्तमान समय की माँग है कि समय के साथ–साथ चलने में ही उन्नति का मार्ग पा सकते हैं।

आपका बन्धु,
बी. पापालाल
१४.१०.३२६
सुन्दर वाचनालय, गुलजार बैठक, नीचे धुलपेट
हैदराबाद ५०० ००६, (आन्ध्र प्रदेश)

सेवा में,
श्री के० के० रावत
अध्यक्ष, पासी सामाजिक सेवा संस्थान (पी.एस.[1])
91/92, संजयपुरम्, लखनऊ–१६

दुर्लभ पुस्तकों से

एका आंदोलन की शुरूवात मलीहाबाद और संडीला से

प्रस्तुत अंश तबस्सुम निज़ामी भारतीय की १९६१ में प्रकाशित प्रसिद्ध पुस्तक *लखनऊ जनपद का राष्ट्रीय इतिहास (स्वतंत्रता संग्राम दिग्दर्शन)* से लिया गया है।

✍ संजीत कुमार

४ फरवरी सन् १९२२ ई० को चौरीचौरा* हत्याकाण्ड हो जाने के कारण **करबन्दी और असहयोग आंदोलन महात्मा गाँधी ने स्थगित कर दिया था।** ११–१२ फरवरी को कांग्रेस कार्यकारिणी समेत असहयोग और करबन्दी आंदोलन स्थगित करने का प्रस्ताव पास कर दिया था। असहयोग आंदोलन स्थगित होते ही पूरे प्रान्त में निराशा फैल गई थी और बहुत से व्यक्ति कांग्रेस की निन्दा करने लगे थे, उनमें **संडीला तहसील का निवासी मदारी पासी अगुवा था।** जिसने जुलाई १९२२ ई० में यह आंदोलन लखनऊ, उन्नाव, हरदोई और फर्रूख़ाबाद जिले में चलाया तथा **मलीहाबाद एवं संडीला तहसील से उसे आरम्भ किया गया।** गाँव–२ में उसकी सुपारी चलती थी कि सत्यनारायण की कथा होगी। **उसका यह निमंत्रण है।** निमंत्रण पाते ही किसान निश्चित स्थान पर लाठी और हथियार ले कर एकत्रित हो जाते। सत्यनारायण के मण्डप के सामने कुरान और गीता रखे रहते व हर किसान दो पैसे चढ़ावा चढ़ाता और यह प्रतिज्ञा करता कि हमारी यह लड़ाई रोजी–रोटी की लड़ाई है इसमें हिन्दू–मुसलमान का सवाल नहीं है। हम सब एक हो कर लड़ेंगे। **यह कार्यक्रम यद्यपि पासी के आदेश से रात्रि में पूरा होता। सत्यनारायण की कथा के पश्चात् मदारी पासी भाषण देता कि सारे किसान गीता उठा कर प्रतिज्ञा करें कि अब वह लगान किसी को नहीं देंगे। पैदावार किसानों की है और केवल किसान ही उसके हकदार हैं। कुर्की आएगी तो कोई किसान बोली नहीं बोलेगा। अदालत में किसी किसान के विरूद्ध कोई गवाही नहीं देगा।**

* चौरीचौरा (जिला गोरखपुर के थाने में एक उत्तेजित समूह ने पुलिस के अत्याचारों से क्रोधित हो कर आग लगा दी थी जिसमें २२ सिपाही थानेदार सहित भस्म हो गए थे। इस हिंसात्मक घटना के कारण महात्मा गाँधी को आंदोलन स्थगित करने का आदेश देना पड़ा था। जनता की भावनाओं पर तुषारापात हुआ, कांग्रेस के कार्यों में स्थिरता आई परन्तु महात्मा गाँधी ने अपने सत्य, अहिंसा की नीति के अनुसार यही अचित समझा था।)

एका आंदोलन के कार्यकर्ताओं ने जमींदारों का बहिष्कार किया और लगान देने से साफ इन्कार कर दिया। इस पर जमींदारों ने दमन नीति की पालन किया, उत्तर में किसानों ने भी लड़ाई–झगड़े की ठान ली जिसके कारण विभिन्न क्षेत्रों में अशान्ति फैल गई। ब्रिटिश सरकार ने मलीहाबाद और संडीला तहसील में फौज़ भेज कर अनेकों किसानों को गिरफ्तार कर लिया। उसके पश्चात् मलीहाबाद तहसील के किसानों का मुकदमा लखनऊ में चला और संडीले के किसानों का मुकदमा हरदोई में हुआ। अदालत ने दो से चार साल तक का अभियुक्तों को कारावास का दण्ड दिया। **मदारी पासी फरार हो गया,** किन्तु उसे भी दो साल की सजा दी गई। यह आंदोलन १९२३ से १९२४ तक चला उसके पश्चात् मदारी पासी सन् १९२७ में भगत सिंह की पार्टी में सम्मिलित हो गया। सन् १९३० में मदारी पासी का देहान्त हो गया। कांग्रेस की ओर से इस आंदोलन की देखरेख के लिए बालमुकुंद बाजपेयी की नियुक्ति की गई थी। श्री ख़्वाज़ा अहमद खाँ के जेल से आने के बाद विशेष रूप से इस किसान आंदोलन में भाग लिया था और उनके प्रभाव से यह आंदोलन तहसील मलीहाबाद में तीव्र गति से चला।

पासी जाति मुजरिम नहीं, एक महत्वपूर्ण सामाजिक संरचना की एक इकाई है।

-चन्द्रभान सिंह

निदेशक

भारतीय साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अकादमी

लखनऊ

एक सर्वेक्षण

बनारस की पृष्ठभूमि में पासी

✍ के० के० रावत

पूर्वी भारत में आर्यों का प्रवेश किस समय हुआ इसका ठीक–ठीक निश्चय कर पाना कठिन है क्योंकि उस समय पूर्वी भारत में काशी नगरी न हो कर एक बस्ती के रूप में जानी जाती थी। प्रस्तर युग की प्राप्त सामग्री के आधार पर ही मि० कार्लाइल ने कहा है:– **''प्राप्त पत्थर हथियार आदिम सभ्यता के प्रतीक हैं, और बनारस, काशी, मिर्जापुर और उसके आस-पास के इलाकों पर आदिम निवासियों का आधिपत्य था, इसको मानने में कोई आपत्ति नहीं है।''** वैसे भी बनारस के आस–पास देखने से पता चलता है, कि भर–पासियों की संख्या काफी है। आर्यो के लिए भर–पासियों की कौम अनार्य थी यह तो सर्व–विदित है कि – आर्यो के आने से भारत में नए मसले खड़े हुए जो कि कोमी और राजनैतिक दोनों ही थे। हारी हुई मूल जातियों के पीछे सभ्यता की एक लम्बी पृष्ठभूमि थी, लेकिन इसमें जरा सा भी शक नहीं कि आर्य लोग भारत की मूल जातियों से अपने को बहुत ही ऊँचा समझते थे। जाति या वर्ग का आरम्भ आर्यो और अनार्यो के भेद से हुआ।

अनार्य कौमों में बनारस के आस–पास भर–पासियों की कौम अत्यंत ही बलवती, साहसी और अग्रणी थी। काशी और उसके आस–पास के इलाकों में यह अनुश्रुति प्रचलित है, कि एक समय में बनारस और गाजीपुर में भर–पासी (**भर** पासी जाति का एक गोत्र है) और सुइयों का अधिकार था। डा० मोतीचन्द्र ने अपनी पुस्तक ''काशी का इतिहास'' के पृ० १६ पर इसकी पुष्टि की है। गाज़ीपुर, मसीनडीह के नीचे स्तर से वाराणसी*/बनारस जिले में बराट से मिर्जापुर शहर के पास से प्राप्त प्रस्तरयुगीन हथियारों से यह सिद्ध होता है। पौराणिक अनुश्रुतियों से भी ज्ञात होता है कि– काशी पर आर्यो के अधिकार करने के बाद इन अनार्य कौमों का प्रभाव निकट के इलाकों पर पूर्णतः कायम रहा।

उत्तर भारत में आर्यो के आने के पूर्व यहाँ पर मूल बाशिंदा ज़्यादातर हिस्सों पर काबिज थे। यह सभी इतिहासकारों ने माना है। इन मूल बाशिंदों में जो समुदाय थे, उनमें भर/पासी मुख्य थे। एच०एम० इलियट तथा कुर्क आदि विद्वानों ने भर–पासियों पर काफी प्रकाश डाला है, और यह बताया है कि भर–पासियों की एक ही कौम है, भर, पासी कौम का एक गोत्र है। संसार में कोई कौम लुप्त नहीं हो पाती है, इनमें बदलाव आता है, वह भी ऐसा, जिससे पुरानी कौमी विशेषताएँ बनी

* ''दिवोदास काशी के राजा हुए तथा इन्होंने वाराणसी नगरी बसाई। यह नई वाराणसी गंगा के उत्तरी किनारे और गोमती के दक्षिणी किनारे पर बसी है।'' –*डा० मोती चन्द्र– काशी का इतिहास, पृ० २४।* ''दिवोदास प्रथम् ने दूसरी वाराणसी की स्थापना की।'' *पाजिटर उल्लिखित पृ० १५५*

रहती हैं। यह किसी एक कौम की बात नहीं है, सभी कौमों की बात है। वनस्पति शास्त्र में पेड़–पौधे को फूलों के विभिन्न समूहों में बाँटते हैं, केवल गुणों के आधार पर, फिर एक ही समान लक्षणों वालों को एक समूह में रख कर नामांकित करते हैं। इस तरह सामूहकि लक्षणों को देखने से ही पता चलता है कि **भर पासी, पासी जाति का एक गोत्र मात्र है।**

"The Bhars are sometimes classed among the Pasis. They have a tradition that in ancient times they were one and the same race, which is indeed very probable." - *M.A. Sharring - HINDU TRIBES & CASTES* Vol. IV P 399, Printed London 1872.

हैहय राजा भद्रश्रेण्य ने दिवोदास को हरा कर काशी (वाराणसी) जनपद पर अधिकार कर लिया था। बाद में मौका पाकर अनार्य राक्षस क्षेमक ने वाराणसी पर कब्जा पर कर लिया था। कुछ समय बाद दिवोदास के पोते अर्लक ने पुनः अनार्यों को मार कर भगाया, और बनारस/वाराणसी को अपने अधिकार में कर लिया था। राक्सों और अनार्यों का तात्पर्य यहाँ की आदिम जातियों से था। इन आदिम जातियों में सबसे अधिक संख्या भर पासियों की थी। प्राप्त जानकारियों से यह ज्ञत होता है, कि आर्यो और अनार्यो में बड़ी कशमकश थी, कभी किसी का पलड़ा भारी पड़ता, कभी किसी का। बाहरी आर्य शक्तियों से लड़ते–२ जब यहाँ के मूल निवासी पासी थक गए, तो पूर्व की ओर बढ़ने लगे। अन्ततः बनारस, गाजीपुर, मिर्जापुर और आज़मगढ़ आदि के जनपदों में फैल गए, लेकिन अपनी सामरिक शक्तियों के कारण ही नई जगहों पर भी अपना आधिपत्य बरकरार रखा।

शिव ने अपनी साख यहाँ की आदिम जातियों/पासियों में किस प्रकार और कब बनाई, इसका रहस्य अभी तक अज्ञात है। शिव अनार्यो के हिमायती होकर धीरे–२ अपने आप को भारत के मूल बाशिंदों में आत्मसात कर लिया, और अन्त में अनार्यों के आराध्य देव के रूप में माने जाने लगे। आर्यों से अलग अपनी पहचान बनाने में सफल हो गए। यही नहीं अपने को कभी भी मानवतावादी धारा से अलग नहीं किया। पौराणिक कथाओं में आर्यो के द्वारा, शिव की अवहेलना की झलक देखने को मिलती है। द्रक्षरास यज्ञ आदि कितने ही उदाहरण मिलते हैं। भरों (भारशिवों का वर्णन करते हुए काशी प्रसाद जैसवाल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *'अन्धयुगीन भारत'* के पृष्ठ–१२ व १३ में लिखा है कि – ***''ऐसे कई राजा थे जिन्होंने आर्यों की भूमि में एक दो नहीं बल्कि दस अश्वमेघ यज्ञ कराये थे।''*** यज्ञ के स्थान को आज भी दश्वामेघ घाट के नाम से जाना जाता है)। शिव, शांत, गम्भीर हर मनुष्य को समान दृष्टि से देखने वाले थे। भारत के मूल निवासियों के प्रत्येक कुल को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। महत्वाकांक्षी, सत्तालोलुप नहीं थे। आडम्बर से दूर रहने वाले, आर्यो की विचारधारा से मेल न खाने वाली विचारधारा के थे। मनुवादी न हो कर मानववादी पहले थे। शायद यह सब कारण थे, जिनके कारण भारत के मूल बाशिंदों में अपना स्थान बना पाए। और आज इनमें आराध्य देव के रूप मे पूजे जाते हैं।

आदि पासियों के भर पासियों ने शिव को बड़ी मान्यता दी। कालांतर में भर पासियों का प्रेम शिव को बहुत अधिक बढ़ गया। यहाँ तक कि भर पासी शिव की मूर्ति को अपनी पीठ पर लाद कर चलते थे। इसी कारण भर पासियों का नाम भार–शिव पड़ा। डा० जायसवाल ने अपनी पुस्तक ***हिस्ट्री ऑफ इंडिया*** १५० ए.डी. से ३५० ए.डी. (एन इम्पीरियल हिस्ट्री ऑफ इंडिया) में भरो की बाबत लिखा है कि– *''बाहरी आक्रमणकारियों को अपने पराक्रम से भरो ने उत्तरी भारत से खदेड़ कर पंजाब तक भगा दिया था। भर, शिव के अनुचर के रूप में शिवलिंग का भार अपनी पीठ पर वहन करते थे, ताकि युद्ध में पीठ दिखा कर अपने देवता को शत्रु के शस्त्रों का लक्ष्य बना कर अपमानित नहीं करेंगे। यह एक प्रतिज्ञा मात्र भी थी। इसका निश्चय परिणाम यह हुआ कि भरपासियों को पराजय का मुँह विजातीय शत्रुओं से नहीं देखने को मिला'*। अपने इष्टदेव शिव को सर्वत्र देखने वाले भरों ने अपनी गतिविधियों से देश के राजनैतिक वातावरण को शिवमय कर दिया था।

भारशिव नाग : नागकुल में जो शिव को इष्टदेव के रूप में मानते थे, उनको ''भारशिव नाग'' कहा जाता था। ये भारशिव नाग पदमावती (पदमपवाय) के निवासी थे। पदमावती/पदमपवाय झाँसी जनपद की तहसील लहरपुर के इलाके में नरवर के समीप है। नाग संस्कृति में जो लोग पाशों (फन्दों) के ज्ञाता थे, वे नागपासी कहलाते थे। जब भर पसियों ने शिव को अपना आराध्य मान लिया तो नागपासियों ने भी मान्यता दे दी, और कालांतर में भार शिवनाग के नाम से जाने गए। इन्हीं नाग भारशिवों ने पदमावती को केन्द्र बनाकर अपने साम्राज्य का विस्तार किया। पुराणों में भी भारशिव नागों के ४ प्रधान केन्द्रों का उल्लेख मिलता है। **१. विदिशा** (मध्य प्रदेश) में आधुनिक भलेशा, **२. पदमावती** (पदमपवाय), **३. कान्तिपुरी** (जिला मिर्जापुर में कान्तिल), **४. मथुरा**। इन भारशिवनागों के उत्कर्ष का प्रधान नायक वीरसेन था जिसने कुषाणों की सत्ता से मध्यप्रदेश को सदा के लिए मुक्त कराया था। नागभरशिवों के मूल स्थान के विषय में इतिहासकारों में मैतक्य नहीं है, कुछ लोग **काशी और कौशाम्बी** (इलाहाबाद की मंझनपुर तहसील में है) के मध्य **मैनच क्षेत्र** (जौनपुर जनपद में जफ़राबाद का क्षेत्र पहले मैनच क्षेत्र के नाम से जाना जाता था) या **प्रासिक क्षेत्र** (प्रयाग का पुराना नाम) में ही कहीं था। डा० जयसवाल ने अपनी पुस्तक इम्पीरियल हिस्ट्री ऑफ इंडिया में इसका उल्लेख इस प्रकार किया है ''**या यह भी हो सकता है कि यह लोग इन क्षेत्रों के मूल निवासी हों और शिव को अपना ईष्ट मान लिया हो।** इनको कहीं *भार शिव*, कहीं *भर*, कहीं *भरपासी*, कहीं *राजभर* तथा कहीं *भरवटिया* आदि के नामों से जाना जाता है पर वास्तव में यह सब एक ही हैं। मिर्जापुर गजेटियर भाग–२ प्रकाशित १९११ (इलाहाबाद) के पृष्ठ २०० और २०२ में जो उल्लेख मिलता है वह इस प्रकार है:– ''**कि हिन्दू भी भरों के साथ रहते थे। भरों के आकार से आभार से आभास होता है, कि ये लोग उच्च कोटि के थे तथा इनका जीवन अत्यंत गौरवमय रहा। कब और कैसे इस भूभाग पर इनका अधिकार हुआ, पता नहीं चलता है, ऐसा जान पड़ता है कि आर्यों के आक्रमण के पूर्व अधिकतर जिले इनके अधिकार में थे। बनारस और निकटवर्ती स्थान तथा**

गाजीपुर,जौनपुर के संबंध में यही कहा जा सकता है कि आर्यों के आक्रमण के समय ये लोग कहाँ तक हटाए गए। निःसन्देह धार्मिक संघर्षकाल में भरों का अधिकार प्राचीन स्थानों पर था। इससे स्पष्ट है कि प्राचीनकाल में जहाँ से इतिहास का प्रारम्भ होता है, गंगातट तक का क्षेत्र इनके अधिकार में था और इन्हीं की आबादी थी।'' अब्दुल हलीम शरार ने भी अपनी पुस्तक गुजिश्ता लखनऊ में इनके बाबत लिखा है कि–

''दो नई कौमें हिमालया की तराई से आकर इस मुल्क पर काबिज हो गईं जो बाहम मिलती-जुलती और एक ही नस्ल की दो शाखाएँ मालूम होती थीं, एक भर और दूसरी पासी।''

(A. H. Sharar- *Translated by E. S. Harcourt & Fakhir Husain- Lucknow The Last - Phase of an Oriental Culture Page-36)*

''पंवारा भी हिन्दी साहित्य है''

''पंवारा भी एक प्राचीन काव्य समझ पड़ता है। पर इसके रचयिता का भी पता नहीं है और न इसकी कोई मुद्रित अथवा लिखित प्रति ही मिलती है। पंवारा विशेषतया पासी लोग गाते हैं और उसमें देशीय राजाओं और जमींदारों का हाल रहता है। जहाँ जो पंवारा प्रचलित है वहाँ के बड़े आदमियों का उसमें यश वर्णित होता है। यह पंवारा राजाओं का यशोवर्णन से प्रारम्भ हुआ जान पड़ता है जैसा कि इसके नाम से प्रकट होता है। यदि कोई मनुष्य श्रम कर के पासी आदिकों से इसे एकत्र करे तो विदित हो कि इसकी रचनाएँ कैसी हैं। अभी तो पंवारा ऐसा नीरस समझा जाता है कि लोग निन्दा करने में किसी नीरस और लम्बे प्रबन्ध को पंवारा कहते हैं।''

(गणेश बिहारी मिश्र, श्याम बिहारी मिश्र एम०ए०, शुकदेव बिहारी मिश्र एम०ए० – **मिश्रबन्धु विनोद**– अथवा हिन्दी साहित्य का इतिहास तथा कवि कीर्तन तृतीय भाग पृष्ठ – १२३३–१२३४)

सं. - ई० राम सागर रावत, उपाध्यक्ष